चकमक

मार्च, 1992 बाल विज्ञान पत्रिका रु. 4.00

अबीर गुलाल ले आई
अगरू चंदन सुगंध सुहाई ॥
लाल रंग होरी खेलूं
केसर रंग धूम मचाई ॥

अनंत पी.आर. वडनेरे

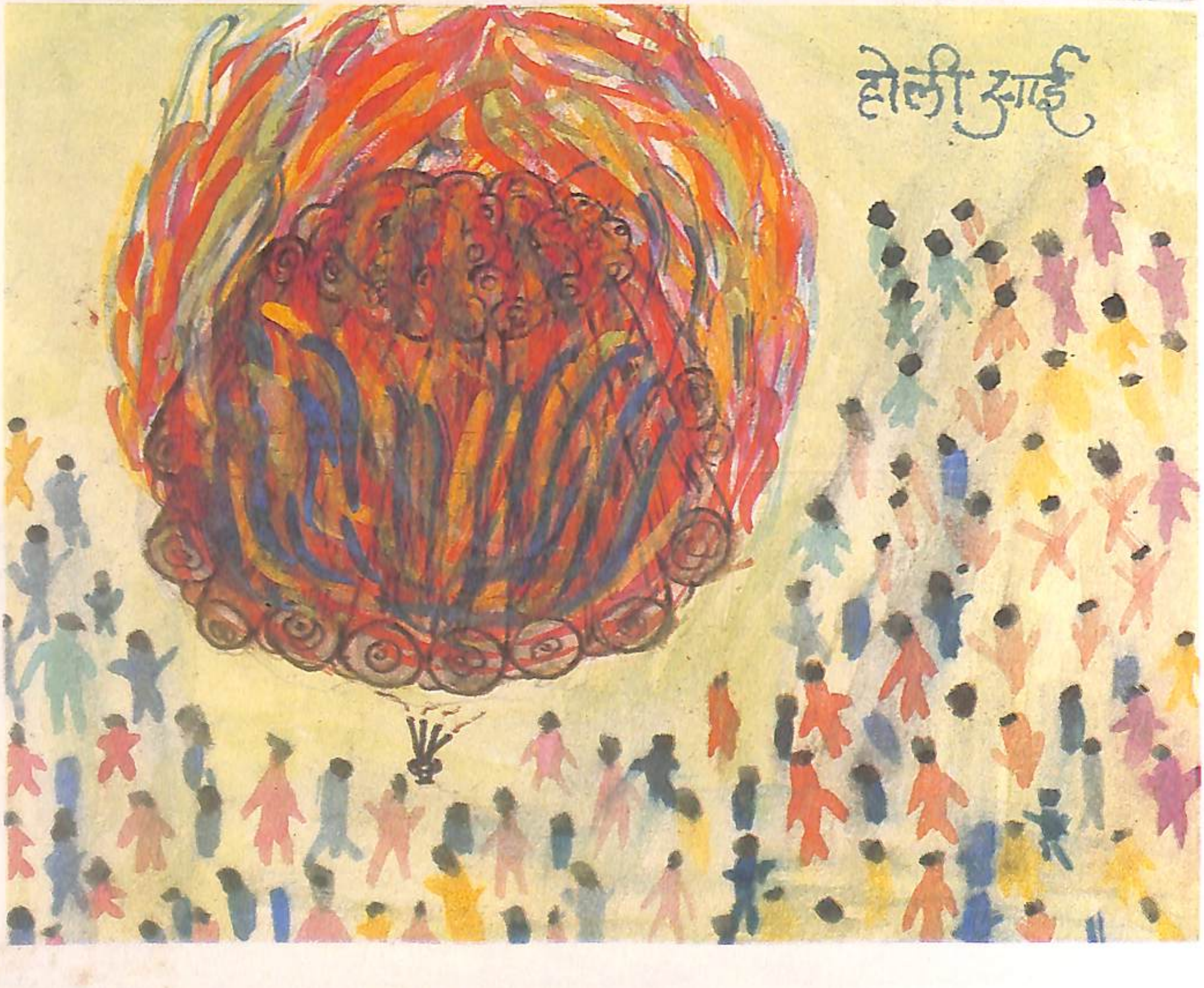

उमाकांत भारद्वाज

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-7 अंक-9 मार्च, 1992

संपादक
विनोद रायना

सह-संपादक
राजेश उत्साही
कविता सुरेश

संपादन सहयोग
दुलदुल विश्वास

कला-सज्जा
जया विवेक

उत्पादन/वितरण
कमलसिंह, मोहन श्रीवास्तव

चकमक का चंदा
एक प्रति : चार रुपए
छमाही : बीस रुपए
वार्षिक : चालीस रुपए
डाक खर्च मुफ़्त
चंदा, मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ़्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता
एकलव्य,
ई-1/208 अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462016 (म.प्र.)
फ़ोन : 563380

कागज़ : 'यूनिसेफ' के सौजन्य से। **सहयोग** : राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार परिषद (विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली)

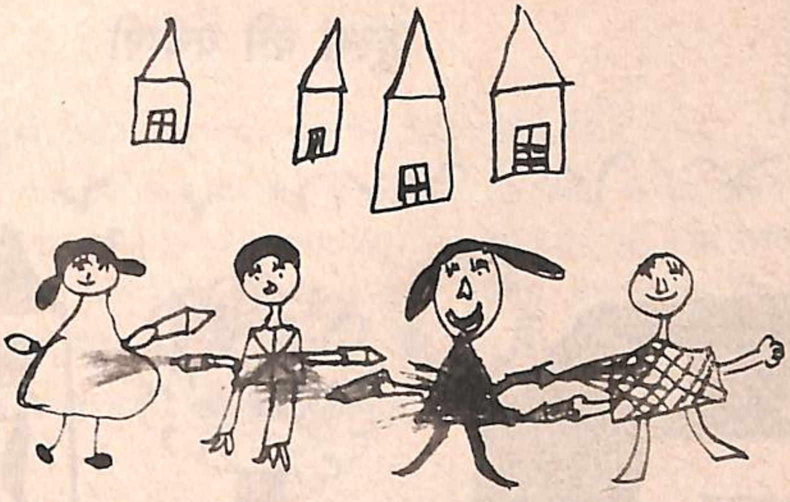

आर्शी खान, तीसरी, देवास

इस अंक में

विशेष

6 □ कुमार गंधर्व
13 □ होली के रंग हज़ार

कविता

20 □ ऐसा क्यों होता है?

कहानी

22 □ होली का हौवा

हर बार की तरह

2 □ मेरा पन्ना
31 □ खेल कागज़ का
33 □ खेल पहेली
34 □ माथा पच्ची
36 □ क्यों .....क्यों 18
37 □ दुनिया पक्षियों की -35
39 □ चित्रकला के आसपास-11

और यह भी

12 □ हमारे वृक्ष-1
19 □ कार्टून
28 □ चकमक समाचार
29 □ सवालीराम
38 □ होली के रंग

आवरण पर
फोटो : कुमार गंधर्व अपने नाती के साथ
आवरण : जया विवेक

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

फूलों की क्यारी

सुमन भट्ट, तीसरी

हमारे घर में एक सब्ज़ियों का बाग तथा सुंदर फूलों का बगीचा है। उस बगीचे में अलग-अलग तरह के फूल लगे हुए हैं। फूलों की देखभाल करने हमारे घर हर हफ्ते माली आता है। मैं भी माली के साथ-साथ घूमता रहता हूं। कभी-कभी मैं भी माली के साथ खुरपी लेकर पौधों की गुड़ाई करने लग जाता हूं। हर रोज़ सुबह उठकर फूलों को पानी देता हूं।

हमारे बगीचे में कुछ फलों के पेड़ भी हैं। जैसे आम, अनार, अंगूर, केला आदि। हमारे आम के पेड़ पर बहुत आम लगते हैं। जब मैं पेड़ से तोड़कर आम खाता हूं तो मुझे बहुत मज़ा आता है। छुट्टी वाले दिन मैं अपने मम्मी-पापा के साथ बगीचे में बैठता हूं। मुझे रंग-बिरंगे फूल बहुत अच्छे लगते हैं। हमारे बगीचे के चारों तरफ फूल लगे हुए हैं। लाल, सफ़ेद, गुलाबी और एक तरफ़ सूरजमुखी के फूल लगे हुए हैं।

तोतों को सूरजमुखी के फूलों की पत्तियां बहुत पसंद आती हैं, इसलिए हमारे बगीचे में बहुत बार तोते सूरजमुखी की पत्तियां खाते दिखाई देते हैं। मुझे तोते बहुत अच्छे लगते हैं, इसलिए मैं चाहता हूं कि हमारे बगीचे में सदा ऐसी चहल-पहल रहे।

❑ विवेक गर्ग, चौथी, पटियाला

हमने बेर खाए

एक दिन मेरे दोस्त ने कहा,''चलो हम नर्सरी का बेर खाने चलते हैं।''

मैंने उसकी बात मान ली तथा मैं और मेरा दोस्त सायकिल से बेर खाने चल दिए। हम लोग नर्सरी में बेर खाने लगे तब तक वहां का चौकीदार आ गया तथा हम लोगों को देखकर डांटा तो हम भाग आए। तब हमने जाकर एक दोस्त से कहा, ''जाओ, नर्सरी में बेर खाने, बहुत पके हैं।''

वह भी बेर खाने चला गया। वह बेर खा रहा था तो चौकीदार ने उसे पकड़ लिया तथा खूब डांटा।

उसने अगले दिन से हमसे दोस्ती करना ही छोड़ दिया।

❑ अजीत कुमार सिंह, सातवीं,उदयपुर, सरगुजा

उमेश कुमार कचेर, करकटी, शहडोल

परीक्षा

देखो आई है परीक्षा
देखो आई है परीक्षा,
पढ़ाई लेकर आई परीक्षा
पढ़ाई लेकर जाएगी परीक्षा!

खेलने का भी सत्यनाश
बैठे हैं, सब हताश
पास होने की साइड
देख रहे हैं गाइड!

जब ख़त्म हुई परीक्षा
खेलने का भी टाईम अच्छा,
देखो आई है परीक्षा
देखो आई है परीक्षा!

❑ अमेय कांत, नौ वर्ष, अरलावदा, देवास

चुनौती

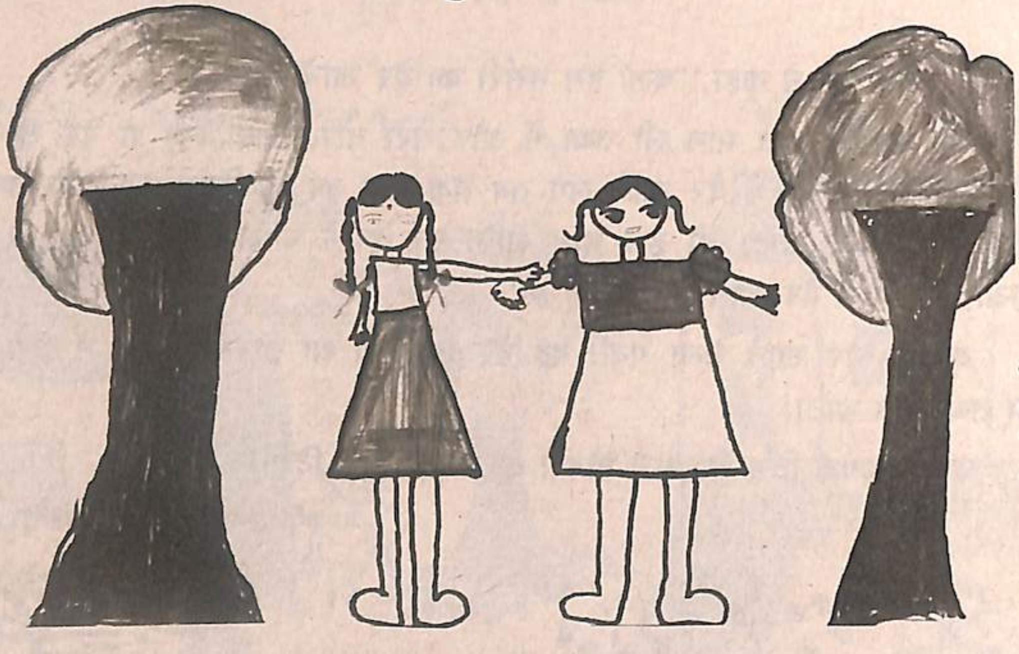

ऋतु सहगल, नौ वर्ष, दिल्ली

सायंकाल का समय था। गांव में हलचल मची हुई थी। मैं अपने घर के पास चबूतरे पर बैठी थी। उसी समय मेरी प्रिय सहेली आई और मेरे पास बैठ गई। मैंने उससे पूछा, ''आपने तो मेरे घर आना ही बंद कर दिया?''

वह बोली, ''क्या करूं कुछ कहा नहीं जा सकता। कहीं भी जाऊं, मां हर वक्त डांटती रहती है। और तुम्हारे घर तो आने ही नहीं देती।''

परंतु हम दोनों भेदभाव नहीं मानते थे। फिर भी डर लगा रहता था कि कोई डांट न दे क्योंकि लड़की है न। समाज लड़की का नाम सुनते ही नाक-मुंह सिकोड़ने लगता है। मेरी सहेली का परिवार ऐसा ही था। मेरी सहेली की एक जगह सगाई तय हुई। उसके घर की परिस्थिति थोड़ी ख़राब थी। मगर क्या करें। मध्यम वर्ग के लिए अच्छे लड़के मिलना मुश्किल है परंतु उसके परिवार वालों ने हिम्मत नहीं हारी। उसके लिए वर मिल गया।

लड़के वाले तो अपने लड़के को गाय-बैलों और घोड़ों की तरह बोली लगाकर बेचते हैं, जहां अच्छी बोली लग गई वहां बेच दिया। मेरी सहेली की शादी के लिए दान-दहेज़ तय हुआ और रुपए भी। मेरी सहेली बड़े ही अच्छे स्वभाव की थी। वह अपनी समस्या मुझे ही सुनाती थी। लड़का अच्छा था पर दहेज़ की मांग पर तैयार था। शादी को दो-तीन महीने रह गए थे। उसका मन बदला हुआ-सा जान पड़ता था। मैंने उससे पूछा,

''तेरा चेहरा इतना मलिन क्यों है?''

वह बोली, ''मेरे पिता में इतनी हिम्मत नहीं कि वह इतना दहेज़ दे सकें। न जाने क्या होगा।''

मैंने कहा, ''कुछ नहीं होगा। तुम इतना क्यों घबरा रही हो, सब ठीक हो जाएगा।''

इतने में उसकी मां ने पुकारा। वह बोली, ''जाऊं, मां बुला रही है।''

मैंने कहा, ''जाओ, जाना तो पड़ेगा ही।"

वह हंस पड़ी और चली गई। मैं कुछ देर तक बैठी मौन सोचती रही कि दहेज़ लड़की के जीवन को जीना दूभर बना देता है और उसकी आशा, निराशा में बदल जाती है। हर लड़की की ज़िंदगी में पग-पग पर चुनौतियां होती हैं जिसे हर लड़की अपना संघर्ष समझ कर सहन कर लेती है।

❑ **कु. कल्पना दुबे, दसवीं, मड़देवरा, छतरपुर**

मेरा पन्ना

एक दिन

सुचिता, पांच वर्ष, उज्जैन

सरिता पंडया, तीन वर्ष, चुनार

गोवर्धन कुमार, छरा

एक दिन मै अपने दोस्त के साथ बाते कर रहा था। तो मै फिसल गया तो मेरे सिर मे चोट लग गई तो मेरे सिर से बहुत खून निकला तो मैं रोने लगा तो सारी भीड़ लग गई तो आलोक ने बाई को और एक भईया को बुलाया बाई ने थोड़ी सी रुई और पानी साथ लाया तो बाई ने रूई पानी मे डाला तो खून पोछा फिर बाई मुझे दवाखाना मे लेगई तो वहां डाकटर नही थे तो हम दूसरे दवाखाना मे गया तो डाकटर ने लाईट जला के देखा तो मेरे बाल काटे तो फिर डाकटर ने कहा इने सूई लगाना पड़ेगा तो मैने कहा कि मुझे सूई नहि लगाना तो मै स्कूल गया तो बाई ने मेरा बैग दिया तो मेरा कमपाकस छूट ने वाला था। तो बड़े सर ने बाई को कमपाकस दिया तो बाई ने मुझे घर छोड़ने घर आई।

□ विकल्प, पांच वर्ष, देवास

कुमार गंधर्व

अजीब बात है। होली के लेख की जब तैयारी चल रही थी तो मेरे मन में यह बात मचल रही थी कि काश मैं होली के उन गीतों को तुम्हारे साथ सुन पाता जो मैंने कई बार सुने हैं। कौन से गीत? वही जो कुमार गंधर्व ने गाए हैं। वैसे तो देश के हर प्रांत में होली, चैती वग़ैरह के गीत हैं, जो अब भी गाएं जाते हैं। लेकिन कुमार जी की बात ही अलग थी।

बचपन में ही उन्होंने ऐसी प्रतिभा का इज़हार किया कि संगीत के आचार्य चौंक उठे थे और उन्हें 'कुमार गंधर्व' का नाम दिया (उनका असली नाम शिवपुत्र सिद्धरमैया कोमकली था)। मैंने ख़ुद उनका गाया हुआ शास्त्रीय संगीत टेप पर सुना है जो उन्होंने नौ साल की उम्र में गाया था।

जब वे अपनी गायकी के शिखर पर थे तो उनके साथ एक दुखद घटना घटी। उनके फेफड़े टी.बी. से ग्रस्त हो गए। एक गायक के लिए इससे बड़ी सज़ा और क्या हो सकती है कि उसका सांस लेना मुश्किल हो जाए! कर्नाटक के रहने वाले कुमार जी को डाक्टरों ने सलाह दी कि वे ऐसी जगह जाकर रहें जहां हवा ज़्यादातर ख़ुश्क रहती हो। कुमार जी ने सलाह मानी और देवास चुना अपनी रिहाइश के लिए। इसी बीच उनका आपरेशन हुआ और एक फेफड़ा निकाल दिया गया। एक ही फेफड़े पर ज़िंदा रहने वाले कुमार जी कई वर्षों तक गायकी से दूर रहे। लेकिन इस बीच उन्होंने मालवी लोक गीत-संगीत का ख़ूब अध्ययन किया। नतीजा यह निकला कि जब उन्होंने दुबारा गाना शुरू किया तो उनकी गायकी में मालवी लोक संगीत का अनूठा समावेश था।

लोकसंगीत से प्रेरित लगभग चार घंटे का एक कार्यक्रम 'रितुराज' उन्होंने तैयार किया। इसमें शास्त्रीय व लोक संगीत में गाई गईं कई रचनाएं हैं। यही कार्यक्रम मैंने सन् 1977 में दिल्ली में, उनसे सुना था, जो भुलाया नहीं जाता। होली के गीतों को जो धुनें उन्होंने दीं और जिस भाव से उन्होंने और उनकी पत्नी वसुंधरा कोमकली ने उन्हें गाया, वह बताया नहीं जा सकता, उसे तो सुनना ही चाहिए। उनके गाने के भाव केवल कानों तक ही सीमित नहीं थे, आंखों के लिए भी थे। गाते समय उनके चेहरे व हाथों के हाव-भाव ध्वनि के साथ इस तरह जुड़ जाते थे कि बस देखते ही बनते थे।

तुम्हें अपने गुरू जी विष्णु चिंचालकर तो याद ही होंगे, जिनकी पत्तियों, कबाड़ तथा बेकार चीज़ों से बनी चित्र आकृतियां तुमने चकमक में कई बार देखी हैं। गुरू जी, कुमार जी के बहुत ही अच्छे मित्र थे। इस मित्रता का एक संगम तुम आगे के पन्नों में देख सकते हो-कुमार जी की मुद्राओं का रेखाकंन, जो गुरू जी ने किया है और कुमार जी द्वारा गाई होली गीतों की पंक्तियां!

12 जनवरी, 1992 की सुबह कुमार जी के उस अकेले फेफड़े ने भी सांस लेना बंद कर दिया। इस साल की होली बहुत फीकी लगेगी। पता नहीं ऐसा इंसान और गायक दुबारा कब पैदा होगा!

❑ विनोद रायना

रंग बरसायो रे,
उमंग भर आयो, मन रिझावन सो ॥
मध सुगंध ले रितुराज रंगायो
बन-घन चहुँ दिस सजावन सो ॥

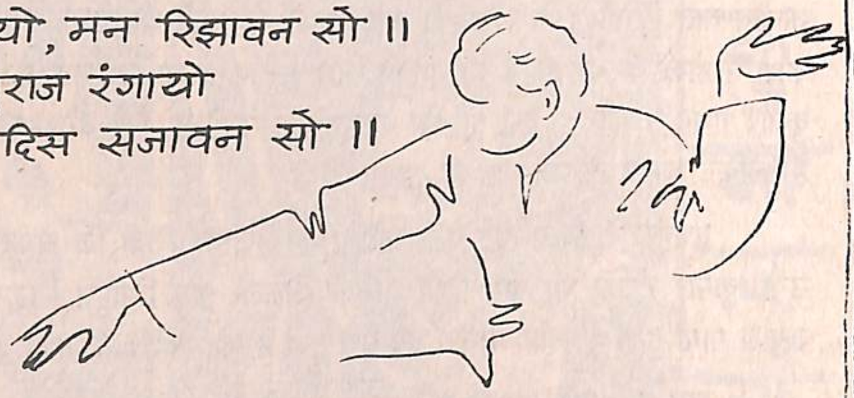

झीनी रंग झीनी रंग केसर रंग भीनी
सारी सुरंग सुहाई ॥
अबीर गुलाल उड़त नभ छाये,
मुखपे मलत सुहाई ॥

आयो रंग फाग सखी सब खेलें
मेरो मन रसिया आरे मंदर ॥
सब रंग घोले धूम मचायो
तुम बिन कैसे खेलू लंगर ॥

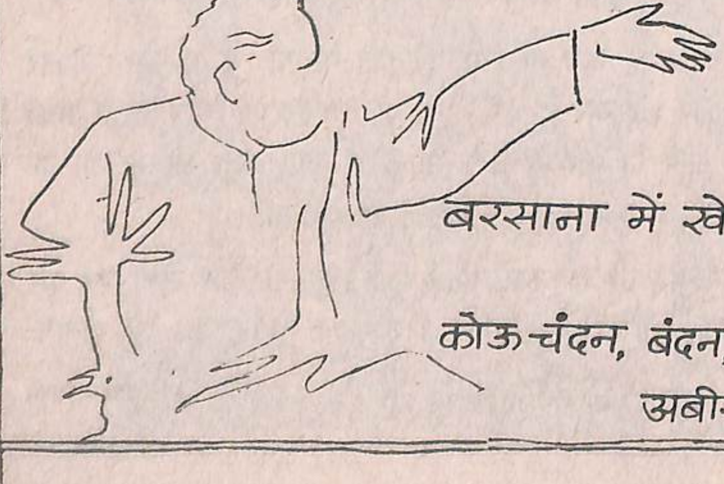

बरसाना में खेलत होरी,
श्री बृखभान किशोरी ॥
कोऊ चंदन, बंदन, अत्तर अरगज,
अबीर गुलाल लिए भर जोरी रे ॥

कैसे तुम हो मूरख
श्याम कन्हैया अनारी ॥
अबीर गुलाल हाथ कुमकुमा
रंग भर भर मारत पिचकारी॥
कहत नायक गोपाल लाल
बीन मृदंग झांझ लिए
लै सुर साध गावे धमार दे दे तारी ॥

चलो सखी खेलें कन्हैया संग होरी ॥
कन्हैया संग होरी, कन्हैया संग होरी ॥
अपने-अपने भवन से निकली,
कोई सावर कोई गोरी,
हाथ लिए कंचन पिचकारी
केसर रंग भरोरी॥
कन्हैया संग होरी॥

रंग केसरिया सिर पागा बंधले
बन-बेलरिया रंग लै खिल आयो रे ॥
पेरी हूँ तो रे सैंयाँ।
रंग कुसुंभि चीरो, घघरो चुनरी रे।
रंग केसरिया सिर पागा बंधले ॥

कुमारजी नौ वर्ष की आयु में

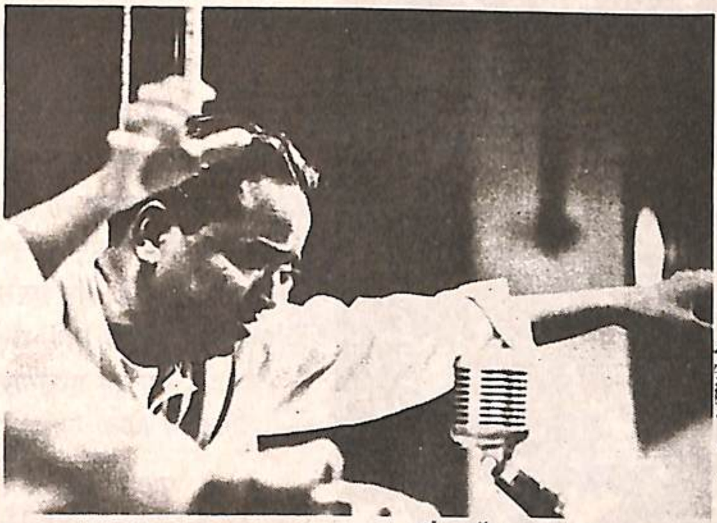

यहां प्रकाशित कुमार जी के सभी फोटो (आवरण सहित) कुमार जी की साठवीं वर्षगांठ पर गंधर्व महाविद्यालय दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'कुमार गंधर्व अभिनंदन समारोह' पुस्तिका से; होलीगीत,'रितुराज महफ़िल' पुस्तिका से तथा विष्णु चिंचालकर जी द्वारा बनाए रेखांकन 'पूर्वग्रह' से साभार लिए गए हैं।

पलाश

होली के कुछ दिन पहले यदि जंगल की ओर निकल जाएं तो दूर-दूर तक दहकते अंगारों जैसे लाल रंग के फूलों से लदे ऐसे पेड़ दिखाई देंगे जिनमें पत्तियां नहीं होंगी। यही है **पलाश** जिसे **टेसू, ढाक, खकरा या छिवला** भी कहा जाता है। अंग्रेज़ी में इसे **फ़्लेम ऑफ़ दि फ़ारेस्ट** (वन ज्वाला) कहा जाता है।

पलाश का वृक्ष मझोले क़द का होता है। इसकी उंचाई 9 से 12 मीटर के बीच होती है। तना सीधा न होकर टेड़ा-मेड़ा होता है। पत्ते गोल और चौड़े होते हैं पत्ते हमेशा तीन के झुंड में निकलते हैं। जाड़े में इसके लगभग सभी पत्ते झड़ जाते है। फिर बसंत के आरंभ में सारा वृक्ष फूलों से लद जाता है। फूल के बाद, शीघ्र ही फल लगते हैं जो हल्के-नीले रंग के और चपटे होते हैं। फूल का ऊपरी भाग अंगारे जैसा लाल, डंठल-सहित घुंडीवाला निचला हिस्सा गहरा कत्थई (लगभग काला) होता है। हर फूल की पांच पंखुड़ियां होती हैं। फूल की पेंदी मुड़ी हुई चोंच के आकार की होती है। इसलिए इसे तोता-वृक्ष भी कहा जाता है। फूल सुंदर तो ज़रूर होता है, पर इसमें गंध नाम मात्र की भी नहीं होती। हां फूल पराग से अवश्य भरे होते हैं।

फूलों के रहने पर वृक्ष पर चिड़ियों का जमघट लगा रहता है। शकरखोरे, मैना, बुलबुल आदि पक्षी दिन भर इन फूलों पर फुदकते रहते हैं। फूल पर लाख के कीड़े ख़ास तौर पर पाए जाते हैं।

पलाश का वृक्ष बहुउपयोगी है। पलाश के पत्तों से पत्तल और दोने बनाए जाते हैं। पत्तों का उपयोग आम पकाने के लिए पाल डालने, बरसात से बचने के लिए 'खोमरी' बनाने तथा छप्पर डालने में भी किया जाता है। फूल से चमकदार केसरिया रंग मिलता है। सूखे फूलों को पानी में भिगो देने पर उनका रंग उतर आता है। अगर इसमें थोड़ा सा चूना मिला दिया जाए, तो रंग चोखा हो जाता है, पर इतना नहीं कि छूटे ही नहीं। टेसू के इस रंग का इस्तेमाल होली में किया जाता है।

पलाश के तने से एक प्रकार का रस निकलता है, जो जम जाने पर गोंद-जैसा हो जाता है। इसका इस्तेमाल दवा के रूप में भी किया जाता है। साथ ही चमड़ा कमाने (चमड़े को उपयोग लायक बनाने) के काम भी आता है। छाल और जड़ से रस्सी बनती है।

पलाश, मध्यप्रदेश, बगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश तथा पंजाब में बहुतायत से पाया जाता है।

हालांकि पलाश अपने लाल फूलों की वजह से जाना जाता है। लेकिन कुछ जगहों पर पीले एवं सफ़ेद रंग के फूलों वाले पलाश भी पाए जाते हैं।

तुमने इतिहास में पलासी की मशहूर लड़ाई के बारे में पढ़ा ही होगा। यह लड़ाई नवाब सिरौजुद्दौला और लार्ड क्लाइव के बीच लड़ी गई थी। पलासी जहां यह युद्ध हुआ, कलकत्ता के उत्तर में 150 किलोमीटर दूर स्थित है। यहां पलाश का वन था, इसी से इस गांव का नाम पलासी पड़ा।

□□□

होली के रंग हज़ार

होली रंगों का त्यौहार है। ऐसे रंगों का जो लोगों के दिलो-दिमाग़ और चेहरों के अलावा कपड़ों, सड़कों, और दीवारों पर भी छाया होता है। काले, पीले, हरे, गुलाबी आदि रंगों के अलावा एक ऐसा रंग भी होता है जिसमें उस दिन सब लोग जी भरकर एक-दूसरे को रंगते हैं। यह रंग है मस्ती और उल्लास का रंग।

होली बसंत के मनभावन मौसम का एक महत्वपूर्ण पर्व है। बसंत, जबकि जंगल में चारों तरफ टेसू के फूल ही फूल नज़र आते हैं। बसंत, यानी खेतों में फूली पीली-पीली सरसों का मौसम। आम पर छाये बौर और कूकती कोयल का मौसम ।

वास्तव में बसंत का मौसम लोगों में नया जीवन, नई उमंग भर देता है। और यही उल्लास हमारे रोज़मर्रा के जीवन में विभिन्न पर्वों से झलकता है। हमारे देश के एक बड़े भाग में होली को ऐसे ही एक पर्व के रूप में मनाया जाता है। विभिन्न जनजातियों और समाजों में बसंत के मौसम में ऐसे कई पर्व मनाए जाते हैं, जो ऊपर से हमें होली जैसे ही लगते हैं। लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि वे होली ही हों।

जिसे हम होली के रूप में मनाते हैं वह मुख्य रूप से उत्तर भारत का पर्व है। दक्षिण में यह पर्व या तो मनाया ही नहीं जाता या फिर इसका स्वरूप अलग तरह का होता है।

तुम पूछ सकते हो कि दक्षिण भारत में होली क्यों नहीं होती? इसका बहुत सीधा-सा जवाब है। दक्षिण भारत में बसंत का मौसम नहीं होता है। दक्षिण में मुख्यतः दो ही मौसम होते हैं गर्मी और

बरसात। जबकि उत्तर भारत में पहले कुछ महीने तेज़ ठंड पड़ती है, फिर बसंत का मौसम आता है, उसके बाद गर्मी और फिर बरसात।

वैसे बसंत अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग महत्व रखता है। रबी की फसल पकने का यही समय होता है। जंगल में बेर,आम, महुआ, चिरौंजी, तेंदू, आदि का फलना-फूलना भी इसी मौसम में होता है। तो किसानों और जंगल की इस उपज पर आश्रित रहने वाले व्यक्तियों के लिए बसंत का अपना ही मतलब है। कई जनजातियां जंगल जलाकर उसकी राख को मिट्टी में मिलाकर खेती (झूम खेती) करती हैं। वे भी जंगल काटने का काम इसी मौसम में शुरू करते हैं।

यहां इस लेख में हम होली और उससे मिलते-जुलते कुछ पर्वों की चर्चा कर रहे हैं।

अब होली के बारे में तो शायद तुम हमसे ज़्यादा ही जानते होगे। होली के सात-आठ दिन पहले गांव, मोहल्ले के चौक पर, या जहां होली जलाई जाती है, होली का डांढ़ा गड़ जाता है और फिर शुरू होती है होली जलाने के लिए लकड़ी जमा करने की मुहिम। आसपास के पेड़ (जिनमें ज़्यादातर हरे ही होते हैं) इस मुहिम का शिकार होते हैं। जिस रात होली जलनी होती है, उस रात को मोहल्ले भर के लोग अपने घरों की चौकसी में लगे रहते हैं। होली के लिए लकड़ी और लकड़ी की वस्तुओं की चोरी तो आम बात है। होली जलाने वालों की टोली हमेशा इसी ताक में रहती है कि कहां से और कैसे होली के लिए लकड़ी जुटाई जाए। हालांकि इसके लिए चंदा तो वसूल किया ही जाता है। पूनम की रात को पूरे विधि-विधान से होली जलाई जाती है। पूजा का प्रसाद बांटा जाता है और उसके साथ ही शुरू होता है मस्ती का आलम। कहीं-कहीं घर के आंगन में छोटी-सी होली जलाने का रिवाज भी है। होली की आग पर बालियां भूनी जातीं हैं और कुछ लोग आटे की बाटियां भी सेंकते हैं।

अगले दिन भर सुबह से शाम तक होली मनाई जाती है। वास्तव में इस दिन होली की राख गुलाल की तरह एक-दूसरे को लगाने का रिवाज रहा है। जो कहीं-कहीं अब कीचड़, मैला तथा धूल में एक-दूसरे को लपेटने तक जा पहुंचा है। इस दिन को धुलेंडी के नाम से भी पुकारा जाता है। वैसे अधिकांश लोग इस दिन एक-दूसरे को रंग और गुलाल ही लगाते हैं। असली रंगों का दिन तो होली जलने के पांचवे दिन यानी रंगपंचमी को होता है। किंतु आजकल ज़्यादातर लोग धुलेंडी के दिन ही होली खेल-खालकर फुरसत हो जाते हैं।

होली जलाने के पीछे जो सर्वाधिक प्रचलित कहानी है, वह हिरण्यकश्यप नाम के एक राजा से जुड़ी है। कहते हैं वह चाहता था कि सब लोग उसे ही भगवान मानें और उसकी पूजा करें। उसकी प्रजा तो शायद उससे डरकर उसे भगवान मानती भी थी, लेकिन उसका अपना बेटा प्रहलाद ही उसे भगवान नहीं मानता था। हिरण्यकश्यप, प्रहलाद से बहुत परेशान था और नाराज़ भी। जब वह सभी तरीकों

से हार गया और प्रहलाद से अपने को भगवान कहलाने में असफल रहा, तो उसने तय किया कि वह प्रहलाद की हत्या कर देगा। हिरण्यकश्यप की एक बहन थी-होलिका। होलिका के पास एक शाल थी, और उसे यह वरदान था कि यदि वह शाल ओढ़कर आग में बैठेगी तो आग उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी। हिरण्यकश्यप ने अपनी बहन से कहा कि वह प्रहलाद को गोदी में लेकर चिता पर बैठ जाए। होलिका ने अपने भाई का कहा माना और प्रहलाद को लेकर चिता पर बैठ गई। लेकिन जब चिता जली तो लपटों में होलिका की शाल उड़ गई और होलिका जल गई। पर प्रहलाद को कुछ नहीं हुआ। इससे मिलती-जुलती कई अन्य कहानियां भी प्रचलित हैं। कहते हैं इन्हीं घटनाओं की याद में होली मनाई जाती है।

बंगाल में आज भी होली जलाते समय उसमें होलिका की मूर्ति बनाकर रखी जाती है।

मध्यप्रदेश, बिहार, आंध्र और उड़ीसा की आदिवासी जनजातियां भी होली जैसे त्यौहार मनाती हैं। मगर उनके त्यौहारों में आग जलाने पर ज़्यादा ज़ोर है न कि रंग खेलने पर।

जैसा कि तुमने पहले पढ़ा। कई जनजातियां जंगल को जलाकर उसकी राख को खेत में फैलाकर फिर खेती करती हैं। कुछ लोग यह मानते हैं कि त्यौहार में जलाई जाने वाली आग, एक तरह से जंगल जलाने और खेती की प्रक्रिया शुरू करने का प्रतीक है। हालांकि जंगल मई में जलाया जाता है,

जब लकड़ियां पूरी तरह सूख जाती हैं।

आंध्रप्रदेश के गौंड आदिवासी फागुन की पूर्णिमा को 'दुरारी' नाम का त्यौहार मनाते हैं। इसमें होली से मिलती-जुलती कई बातें होती हैं। मगर रंग खेलना, मौज-मस्ती करना शामिल नहीं होता। वे इसे अत्यंत गंभीर त्यौहार मानते हैं। त्यौहार में गांव के केवल वही लोग भाग ले सकते हैं जो उस वर्ष गांव में रहकर खेती करने वाले हैं। जो लोग उस वर्ष गांव छोड़ने की सोच रहे हैं या दूसरे गांव में खेती करने वाले हैं, वे इसमें भाग नहीं लेते।

चौदस की शाम को गांव के मुखिया के घर में दो बांसों को सजाया जाता है। इन बांसों के सिरों पर खाने की कई चीज़ें (जैसे बड़ा, रोटी, मिठाई आदि) बांधी जाती हैं। फिर इन्हें एक जुलूस के साथ गांव के बाहर ले जाकर ज़मीन में गाड़ा जाता है। उनके चारों और लकड़ियां जमाई जातीं है और फिर आग लगा दी जाती है। जैसे ही जलकर बांस नीचे गिरने लगता है, उसमें बंधी रोटी, मिठाई आदि को हाथों में झेलकर उसे प्रसाद रूप में खाया जाता है। अगले दिन बच्चे घर-घर जाकर ज्वार इकट्ठी करते हैं और इसे होली की आग पर उबालते हैं। फिर उबली ज्वार और कुल्हाड़ी लेकर हर परिवार का मुखिया अपने खेत में जाकर अच्छी फसल होने की प्रार्थना करता है।

उड़ीसा के गौंड आदिवासी अपने ऐसे ही एक पर्व में ज़िंदा मानव की चिता जलाते थे और चिता की राख को खेतों में बिखेरा जाता था। उनका यह मानना था कि इससे खेतों की उर्वरता बनी रहेगी और फसल अच्छी होगी। हालांकि यह पर्व आज भी मनाया जाता है लेकिन अब इसमें मानव नहीं, बल्कि जानवर को जलाया जाता है।

मध्य प्रदेश में कई आदिवासी जनजातियां निवास करती है। मंडला जिले में बसी गौंड जनजाति होली का त्यौहार मनाती है। आमतौर पर होली उनका त्यौहार नहीं है, पर अन्य जातियों के प्रभाव से वे होली मनाने लगे हैं। पर होली मनाने का उनका अपना तरीका है और कुछ-कुछ आंध्र प्रदेश के गौंड आदिवासियों के 'दुरारी' त्यौहार से मिलता-जुलता।

गांव का मुखिया फागुन की पूर्णिमा से चार-पांच दिन पहले अपने साथ कुछ व्यक्तियों को लेकर गांव के पूर्वी छोर पर जाता है। साथ जाने वाले व्यक्ति ढोल-मंजीरे बजाते हुए जाते हैं। वहां दस-बारह फुट ऊंचा एक खंभा गाड़ा जाता है। साथ में एक अंडा, सिक्के और तांबे की अंगूठी गाड़ी जाती है। मुर्गे की बलि चढ़ाकर, उसे वहीं पकाकर खाया जाता है। फिर खंभे के पास सेमल के पेड़ की एक डाली भी गाड़ी जाती है। इन दोनों के आसपास

अगले चार-पांच दिन लकड़ियां इकट्ठी की जाती हैं। फागुन की पूर्णिमा की रात गांव के सभी लोग वहां जमा होते हैं और सुबह मुखिया होली जलाता है। लोग अपने-अपने औजार जैसे हंसिया, हल का फाल आदि लाकर आग में डालते हैं। उनकी मान्यता है कि आग में डालने से सोए हुए औजार जाग जाते हैं। अगर हम एक अन्य नजरिए से देखें तो यह औजारों की ज़ंग साफ़ करने का एक-अच्छा तरीका है।

थोड़ी देर बाद जब लकड़ी जल चुकी होती है तो गांव का एक अन्य व्यक्ति जिसे 'भूमिया देवर' कहा जाता है, कुछ राख उठाकर अलग रखता है, उसकी पूजा करता है और फिर सभी पर छिड़क देता है। फिर ढोल-मजीरों के साथ फाग गाई जाती है, नाचते हैं। टेसू के फूलों को उबालने से जो रंग निकलता है, उसे वे एक-दूसरे पर फेंकते हैं। इसी के साथ-साथ ही कुछ और गतिविधियां भी होती हैं जिनमें वे अपने स्वास्थ्य, खेती और मवेशियों आदि के लिये टोटका करते हैं। गौंड लड़के-लड़कियां एक-दूसरे पर धूल आदि डालकर धुलेंडी मानते हैं। वे एक-दूसरे को अपशब्द भी कहते हैं और लाठियां भी बरसाते हैं।

उधर बस्तर जिले के अबूझमाड़ इलाके में रहने वाले माड़िया गौंड होली के आसपास यानी मार्च के महीने में ऐसा ही एक पर्व मनाते हैं। यह पर्व नई फसल को खाना शुरू करने में पहले उसकी पूजा के रूप में मनाया जाता है।

मध्य प्रदेश के पश्चिम निमाड़ में बसने वाली भील, भिलाला और बारेला जनजातियां भी होली से कुछ दिन पहले एक पर्व मनाती हैं, जिसमें कुछ-कुछ होली की झलक मिलती है। 'भगोरिया' के नाम से प्रसिद्ध यह पर्व मुख्य रूप से अविवाहित भील, भिलाला और बारेला लड़के-लड़कियों को अपना जीवन साथी ढूंढने/पसंद करने का मौका देने वाला पर्व है। इतना ही नहीं। इसमें लड़के-लड़की द्वारा एक-दूसरे को पसंद करने पर 'भाग जाने' की आज़ादी भी है। शायद इसी से इसे 'भगोरिया' कहा जाता है।

भगोरिया पश्चिम निमाड़ के कुछ गांवों में होली से ठीक पहले पड़ने वाले साप्ताहिक हाट के दिन आयोजित होता है। इस हाट को 'भगोरिया हाट' कहा जाता है। आस-पास के गांवों में रहने वाली उक्त जनजाति के लड़के-लड़कियां सज-धज कर इस हाट में आते हैं। पहल लड़का करता है वह अपनी पसंद की लड़की के मुंह पर गुलाल मलता है। यदि लड़की भी इसका जवाब गुलाल मलकर

देती है तो समझा जाता है दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हैं। यदि लड़की की तरफ से तुरंत कोई जवाब नहीं मिलता तो लड़का उसका पीछा करता है और मौका मिलने पर फिर गुलाल लगाता है।

जब दोनों एक-दूसरे को पसंद कर लेते हैं तो दिन भर हाट में साथ-साथ घूमते हैं। हाट के बाद दोनों अपने घर ना जाकर दो-चार दिन के लिए जंगल में या रिश्तेदारों के घर चले जाते हैं। इसके बाद उनके अपने रीति रिवाजों के अनुसार दोनों का विवाह कर दिया जाता है।

भगोरिया हाट के दिन सारा वातावरण गुलाल और उल्लासमय होता है।

पुराने संस्कृत नाटकों में बसंत ऋतु में मनाए जाने वाले एक और त्यौहार का वर्णन मिलता है। इसे बसंतोत्सव या मदनोत्सव कहा जाता है। इस त्यौहार में होलिका जलाने की बात तो नहीं है, मगर रंगों से खेलना, मौज-मस्ती करना महत्वपूर्ण था। इस दिन कामदेव की पूजा की जाती है। कामदेव यौवन और प्रेम के देवता माने जाते हैं।

उत्सव के दिन सारे नगर में उल्लास का माहौल होता था। सभी स्त्री-पुरुष, छोटे-बड़े मिलकर नाचते गाते थे। केसर और गुलाल एक-दूसरे पर फैंकते थे। पिचकारियों में रंग भरकर एक-दूसरे पर डालते थे। शाम को जगह-जगह नाटक खेले जाते थे, संगीत का आयोजन होता था।

कर्नाटक में फागुन की पूर्णिमा को 'काम दहन' के रूप में मनाया जाता है। मान्यता है कि इस दिन शिवजी कामदेव से नाराज़ हो गए थे और उन्होंने उसे भस्म कर डाला। इसी को याद करते हुए यह पर्व मनाया जाता है। कामदेव की मूर्ति बनाकर उसे लकड़ी के ढेर पर रखकर जलाया जाता है। सब लोग इस आग के चारों ओर नाचते हैं। महिलाएं मटकों में मिठाईयां भरकर रखती हैं

(शेष पृष्ठ 30 पर)

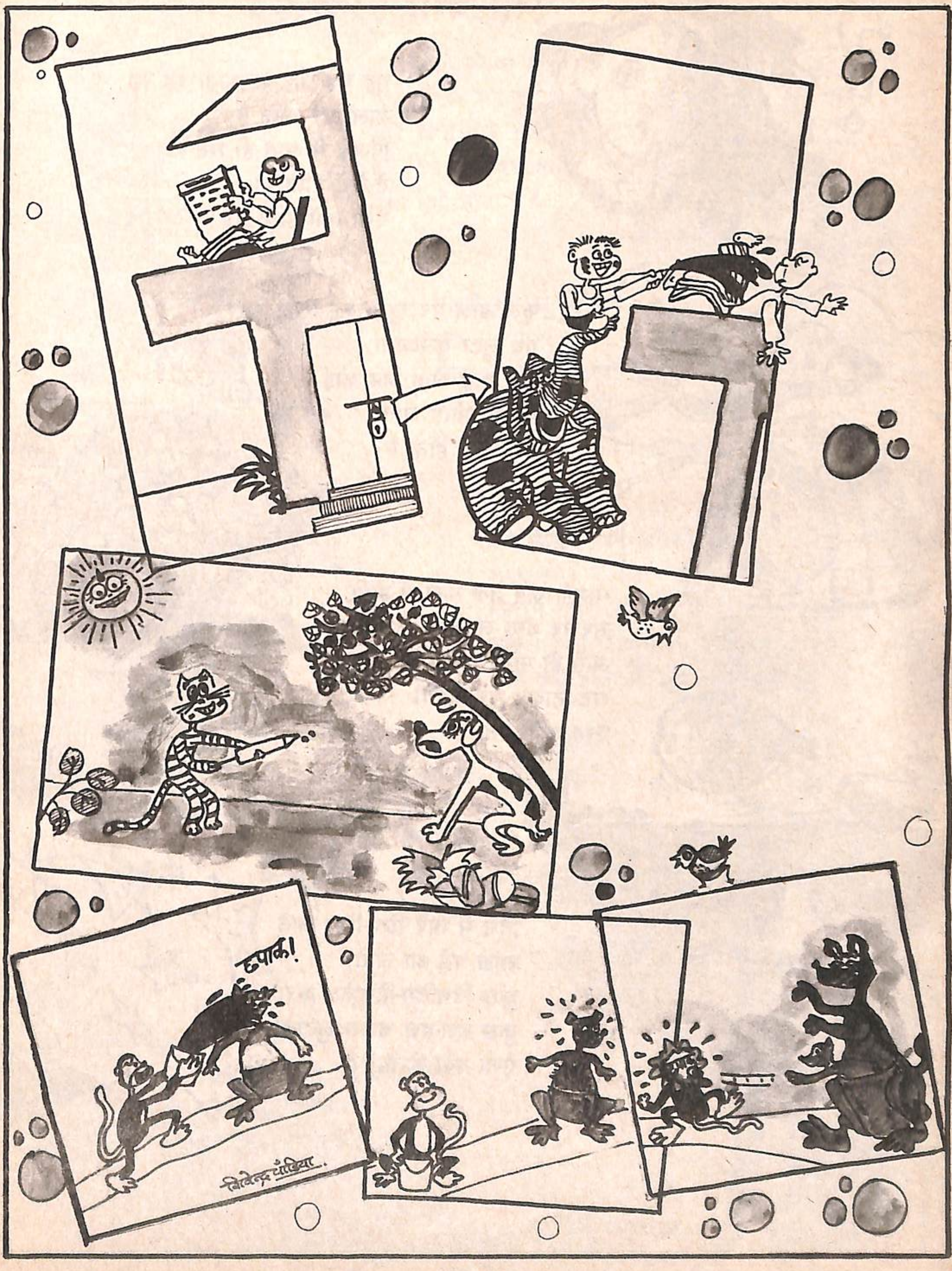

छपाक!

ऐसा क्यों होता है?

चुह चुह चह चह गाता रह रह
डालों पर तोता है,
पिंजड़े में आते ही छटपट
टें-टें-टें रोता है।
ऐसा क्यों होता है?

फूल डाल पर खुल-खुल खिल-खिल
गंध लुटा मुसकाता,
उसे तोड़ लेता जब कोई
वह मुरझाता जाता।
ऐसा क्यों होता है?

मछली जब तक जल में होती
सरसर दौड़ लगाती,
आते ही पानी से बाहर
छटपटाकर मर जाती।
ऐसा क्यों होता है?

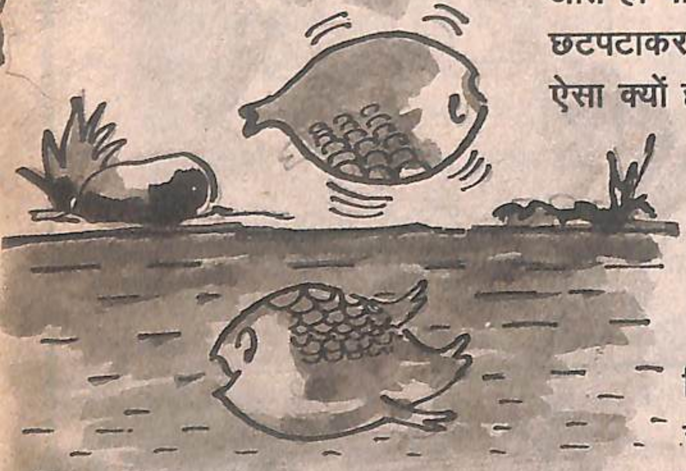

दिन में तारे छिप-छिप जाते
सांझ पड़े आ जाते,
कुछ टिमटिम-टिमटिम करते
कुछ हंस-हंस चमक लुटाते।
ऐसा क्यों होता है?

चांद रोज़ घटता-बढ़ता है
सूर्य न रूप बदलता,
चांद कभी छिप भी जाता पर
हर दिन सूर्य चमकता।
ऐसा क्यों होता है?

पलकें मुंद जातीं आप ही
जब मनुष्य सोता है,
आसूं आ जाते आंखों में
जब भी वह रोता है।
ऐसा क्यों होता है?

ऐसे बिखरे प्रश्न अनेकों
डगर-डगर कण-कण में,
जिसने उत्तर खोज लिया वह
सफल हुआ जीवन में।
ऐसा क्यों होता है?

ऐसा क्यों, कैसे होता है
तुम भी प्रश्न उठाओ,
सोचो समझो, पढ़कर जानो
पूछपूछ सुलझाओ।
ऐसा क्यों होता है?

आंखें खोल चला करते वे
चतुर-सयाने ज्ञानी,
किसी बात की तह तक जाते
कहलाते विज्ञानी।
ऐसा क्यों होता है?

❑ विष्णुकांत पांडेय

चित्र : आशीष रानडे

होली का हौवा

हरीश के घर पर बैठक जमी थी। मोहन, दीपक, अकबर, राकेश, पीटर- सभी इकट्ठे हुए थे। बारी-बारी से हर कोई अपना सुझाव पेश कर रहा था। पर अभी तक कुछ भी तय नहीं हो पाया था। सुझाव आता और बहस हो पड़ती। बहस के सरोवर में सुझाव कुछ क्षणों तक उतराता रहता, फिर डूब जाता।

"तो फिर आख़िर करें क्या?" हरीश उकताकर बोला।

"भाई, होना तो कुछ ऐसा चाहिए कि बस मज़ा आ जाए जनता को।" दीपक ने कहा।

"जो आज तक न हुआ हो, ऐसा हो तो बात बने।" राकेश बोला।

"वही तो हम सब सोच रहे हैं, पर कुछ पते की बात सूझे तब न।" पीटर ने मायूस होकर कहा।

"मेरा एक सुझाव है। यदि तुम सब मानो तो!" अकबर ने सिर खुजलाते हुए कहा।

"हां, हां, बोलो।" सब बोल पड़े।

अकबर बोला, "जब भीड़ में कुछ समझ में न आ रहा हो, तो एकांत में सोचना चाहिए।"

"धत्त तेरे की! मैं तो सोच रहा था कि कुछ अनोखी बात तू बताएगा, पर तू तो सिद्धांत झाड़ने लगा।" राकेश उबल पड़ा।

"ठीक है, यह भी कर देखो। अलग-अलग चल कर सोचो शायद कुछ सूझे।" मोहन ने अकबर का समर्थन किया।

"तो चलो अलग-अलग चलकर सोचें। पांच-सात मिनट बाद फिर यहीं इकट्ठे होकर अपनी-अपनी सूझ पेश करें। पर कुछ ऐसी तरक़ीब सोचना कि बस होली पर मज़ा आ जाए।" पीटर ने कहा। राकेश भी उछलकर खड़ा हुआ और फिर एक ओर चल दिया।

"मैं चला नीम के नीचे!" मोहन बोला और वह भी चल दिया।

"मैं उस कोने के पत्थर पर बैठकर सोचता

हूं।'' यह कहते हुए अकबर ने पत्थर की ओर अपने क़दम बढ़ाए।

''और मैं चंपा के पेड़ के नीचे खड़ा होकर सोचूंगा।'' कहता हुआ पीटर चल दिया।

''तो जाओ सभी। मैं तो यहीं जमूंगा। सरस्वती यहीं ज्ञान देंगी मुझे।'' दीपक उकड़ूं बैठकर बोला।

''रहा मैं, तो मैं बाथरूम जाऊं। वहीं एकांत में मज़े से सोचूंगा।'' कह कर हरीश ने दरवाज़े की ओर क़दम बढ़ाए।

हरीश की बात सुनकर दीपक को हंसी आ गई। बोला, ''पर हरीश, आर्कमिडीज़ की तरह नंगे भागते हुए मत आना बाथरूम से!''

''नहीं भाई, मुझे कोई आयतन नापने का तरीक़ा थोड़े ही खोजना है। हमें तो एक तरक़ीब भर सोचना है।'' जाते-जाते हरीश ने मुड़कर मुस्कुराते हुए कहा और वह दीवाल की ओट में ओझल हो गया।

सभी लोग अपने-अपने स्थान पर पहुंचकर सोचने लगे। इस होली पर ऐसा क्या अजब अनोखा किया जाए कि लोग बरसों तक यादकर हंसते रहें। सब इस अहम मसले पर ही एकांत में गंभीरता से सोच रहे थे।

पांच-सात मिनट बीते, तो एक-एक कर फिर सब पुरानी जगह पर इकट्ठे हुए। हरीश अभी तक नहीं आया था। सब दरवाज़े की ओर देख रहे थे। अपने-अपने सोचे हुए सुझावों को पेश करने की उतावली उनके चेहरों पर साफ़-साफ़ उभर रही थी। इतने में हरीश आता हुआ दिखाई दिया। उसके चेहरे पर मुस्कराहट खिल रही थी। आते ही वह बोला, ''तो पंचो, बोलो, क्या-क्या सोचा तुम लोगों ने?''

मोहन बोला, ''मैंने सोचा है कि रंगों से भरे फुग्गे लोगों पर छोड़े जाएं। फूटेंगें तो लोग रंगों से सराबोर हो जाएंगे।''

''मेरी समझ में हरा-नीला रंग डालकर पान बनाए जाएं। लोग जब खाएंगे, तो उनका रंग-बिरंगा मुंह देखते ही बनेगा।'' अकबर ने अपना सुझाव रखा।

पीटर ने सुझाया, ''सबके चेहरों पर कोलतार पोता जाए। लोग बरसों तक इस होली को याद रखेंगे।''

''हुश! बेहूदा सुझाव हैं ये सब! हां, भाई हरीश, अब तुम ही बताओ अपना बाथरूमी विचार। वही मार्के का होगा।'' दीपक बोला।

हरीश मुस्कुराते हुए बोला, ''मैंने सोचा है कि......।'' और वह सबके चेहरे पर अपनी शरारती नज़र घुमा कर देखने लगा।

''हां, भाई, बोलो क्या सोचा है तुमने?'' सब एक साथ ही उतावले होकर बोल पड़े।

''मैंने सोचा है कि.......। पर पता नहीं तुम लोगों को

बात पसंद आती है कि नहीं,'' हरीश ने झिझक का बहाना बनाते हुए कहा।

''बोलो तो कुछ। आख़िर क्या सोचा है तुमने?'' मोहन ने उसे कुरेदा।

''मैंने सोचा है कि हम सब होली तक एक पुतला बनाएं। आदम-क़द पुतला। पुतला ऐसा अजीब बने कि लोग देख-देख कर लोट-पोट हो जाएं। हंस-हंस कर पेट पकड़ने लगें अपना, तब मज़ा आएगा।'' कहते हुए हरीश ने अपनी आंखें मटकाईं।

''हां, है तो पते की बात।'' बड़े-बूढ़े का-सा सिर हिलाकर दीपक बोला।

''तो मिलाओ हाथ। अजब पुतला बनाएंगे हम साथ-साथ, सब देखेंगे उसे दम साध-साध।'' अकबर अपना हाथ बढ़ाकर बोला।

मोहन बीच में ही अकबर का हाथ थामकर बोला, ''लोग दशहरे पर रावण बनाते हैं। हम होली पर हिरण्यकश्यप बनाकर जलाएंगें। लोग वाह-वाह कर उठेंगे हमारी सूझ पर।''

''उसे हम होली का हौवा कहेंगे। बनाएंगे ऐसा कि हिरण्यकश्यप का भी बाप दिखे।'' पीटर कुछ जोश में आकर बोल पड़ा। उसकी बात सुनकर सब हंस पड़े।

''तो यह तय रहा। पुतला मोहन के घर के पिछवाड़े में बनाया जाए। झाड़ों की आड़ रहेगी। क्यों मोहन?'' राकेश ने पूछा।

कंधे उचकाते हुए मोहन ने जवाब दिया, ''मुझे क्या आपत्ति हो सकती है। शौक़ से बनाइए होली का हौवा। पर हौवा होली के दिन ही लोगों को दिखाया जाए, तब तक हम गुप-चुप ही उसे तैयार करेंगे।''

''यह अच्छा रहेगा। एकाएक एक अजीब पुतला मोहन के आंगन में खड़ा देखकर लोग अचम्भे में पड़ जाएंगे।'' राकेश ने कहा।

''बिल्कुल ठीक। हम सब होली का हौवा बनाएंगे फिर उसे रात को जलाएंगे।'' अकबर ने यह तुक गाकर जोड़ी तो सब फिर हंस पड़े।

दीपक ने कहा, ''अभी होली के दस रोज़ बकाया हैं यारों, जुट पड़ो कल से ही पुतला बनाने।''

''अच्छी बात है। हम सब कल शाम से रोज़ मोहन के घर इकट्ठे हुआ करेंगे। जो चीज़ ज़रूरी मालूम पड़े वह लेकर आएं। अब चलो, चलें घर।'' राकेश ने कहा।

सब हंसते-बतियाते खुशी-खुशी अपने-अपने घर चले गए।

दूसरे दिन से काम शुरू हुआ। स्कूल से जैसे ही लड़के छूटे, सब मोहन के घर आकर जुट गए। ज़रूरत की चीज़ें वे लोग लेकर आए थे। और भी चीज़ों के बारे में सोचा गया। जो मिलीं उन्हें इकट्ठा कर लिया गया। बांसों को फाड़कर खपच्चियां बनाई गईं। रंगीन काग़ज़, कपड़े, मिट्टी, रस्सियां तथा अन्य कई चीज़ों को जोड़-जाड़कर लड़कों ने कुछ ही दिनों में एक अजीब ढांचा तैयार कर खड़ा कर दिया। ढांचे को रंग-बिरंगे काग़ज़, कपड़ों से ढंक दिया गया। पुतले के हाथ पैर काफ़ी लंबे और पतले बनाए थे। पेट मटका-सा फूला हुआ था। छाती चौड़ी पर धंसी हुई थी। गर्दन पतली, पर लंबी। गर्दन पर लटकाया गया था एक बड़ा सा तूम्बा; जिसे सफ़ेदे से पोत दिया गया। तूम्बे पर नाक, आंखें, भौंहें और मुंह विचित्र ढंग से चित्रित किए गए थे। नाक के नीचे चिपकाई गईं थीं ऐठीं हुई झब्बेदार मूंछें। पर दाढ़ी चिकनी ही रहने दी गई थी। सिर रखा गया सफाचट। उस पर रखी गई थी रंगीन टोपी। शरारती राकेश ने पुतले के माथे पर त्रिपुंड लगा दिया था और गले में बड़े-बड़े गुरियों की माला पहना दी थी। दीपक कहीं से ले आया था एक गेरुआ झंगला जो उसने काट-छांट कर पुतले को पहना दिया था। सचमुच पुतला कमाल का बन गया था। ऐसा अजीबोग़रीब रूप था उसका कि देखते ही हंसी फूट पड़ती थी। बनाने वाले ख़ुद उसे देखकर हंसते और हंस-हंसकर लोट-पोट हो जाते।

होली के दिन लगभग नौ बजे पुतला लाकर आंगन में खड़ा कर दिया गया। आते-जाते लोगों ने वह अजीब ढंग का पुतला देखा तो ठिठककर खड़े हो गए। लोग उसे देखते और हंसते।

हंसते-हंसते आगे बढ़ जाते। जो उन्हें रास्ते में मिलता उससे पुतले की चर्चा करते। धीरे-धीरे भीड़ बढ़ने लगी। अच्छा ख़ासा मजमा जुड़ गया।

लड़के अपने करतब पर खुशी से फूल रहे थे। वाह! क्या चीज़ बनाई है हम सबने। शहर भर में शोर मच गया है।

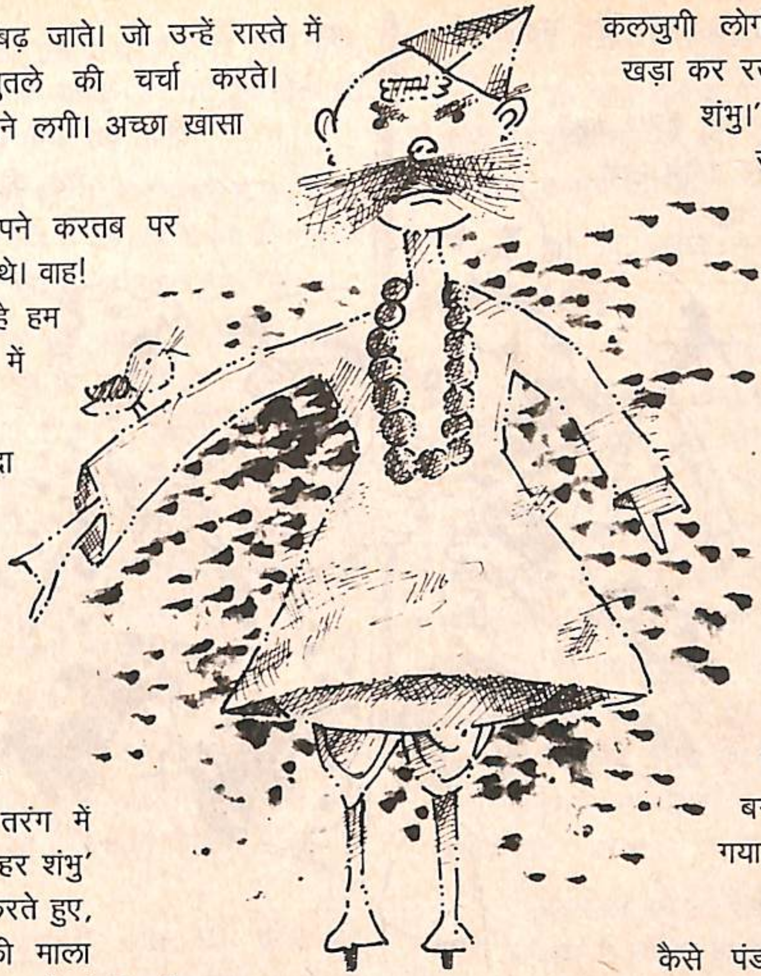

पंडित सदा सुखलाल नदी से नहाकर चले आ रहे थे। होली पूर्णिमा का पर्व था इसलिए आज कुछ गहरी ही छानी थी उन्होंने। भंग की तरंग में ऊंचे स्वरों में 'हर हर शंभु' का ज़ोरदार जप करते हुए, हाथ में गुरियों की माला सरकाते वह चले आ रहे थे कि भीड़भाड़ देखकर ठिठक गए। 'हर हर शंभु' की एक ज़ोरदार हांक लगाई और बोले, ''भाईयो, काहे ये भीड़ भड़क्का लगाय रखा है इस प्रात बेला में?''

''अरे पंडित जी, ज़रा उस पुतले को तो देखिए। लड़कों ने कैसा मज़ेदार बनाया है।'' एक आदमी ने उन्हें पास बुलाते हुए हंसकर कहा।

''देखन दिओ, बंधुओ,'' पंडितजी अपना दुपट्टा संभालते हुए बोले।''

आओ, पंडत सदासुख, देख लो अपना सरूप।'' पुराने लंगोटिया बिहारीलाल ने चुटकी काटी।

पंडित जी ने बिहारीलाल की ओर आंखें तरेरीं और मुंह बिचका दिया, फिर पुतले की ओर देखा तो बौखला पड़े, ''क्या मज़ाक उड़ाय रहे हो पंडतन का। ऐसे बिजुके को ऐसो त्रिपुंड! और भक्तन जैसी मालाएं पहिनाय दीनी हैं राक्षस को। तुम सब कलजुगी लोगों ने ये काय तमाशा खड़ा कर रखो है। हरे शंभु हर हर शंभु।'' पंडित जी ज़ोर-ज़ोर से बड़बड़ाने लगे। सब लोग सकपका गए। जो हंस रहे थे उनकी हंसी ग़ायब हो गई। लड़कों को तो काठ मार गया। बेचारे सिकुड़ कर खड़े हो गए।

''क्या हो रहा है?'' कहता हुआ भीड़ को चीरता ठाकुर मज़बूतसिंह सिर से ऊंची लाठी लिए पंडित जी की बगल में आकर खड़ा हो गया।

''देखो, देखो ठाकुर! कैसे पंडतन को, भक्तन को मज़ाक उड़ायो जा रहो है। या पुतला की ओर देखो। और ओ की मूंछें तो देखो। बिलकुल तुमाय जैसी ऐंठी हुई झब्बेदार हैं। तुमाय भी नकल बनाय दीनी है लड़कन ने, ठाकुर।'' पंडित जी ठाकुर को उकसाने की गरज़ से जोर से बोले।

ठाकुर मज़बूतसिंह चौंका। मूंछों पर उसने हाथ फेरा और पुतले की ओर देखकर बोला, ''कौन ने यह पुतला बनाया है? ऐसे तुंदियल सींकिया पुतले की ऐसी ऐंठदार मूंछें। क्यों रे मोहन क्या ठाकुरों की मज़ाक उड़ाई है तूने?'' ठाकुर लड़कों की ओर घूर कर लाल-लाल आंखों से देखने लगा। डर के मारे सब लड़कों के चेहरे पीले पड़ गए।

बेचारे मोहन की तो सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। मोहन का पिता भगवान दास हाथ जोड़कर ठाकुर को मनाने लगा,''ठाकुर साहब, नाराज़ न हों। हम क्या जानते थे कि लड़कों का बनाया यह पुतला यह बवाल खड़ा करेगा। आप क्षमा करो बच्चों को।'' पर

ठाकुर भनभनाता ही जा रहा था। भीड़ सहमी हुई तमाशा देख रही थी।

"भाइयो, क्या बात है?" कहते हुए कुर्ता पायजामा और रंगीन टोपी से सुशोभित सीताराम जी आगे आकर खड़े हो गए। उनके साथ सेठ छदामीलाल भी थे।

"यह देखिए, नेता जी। कैसा पुतला बनाया है इस भगवानदास के लड़के ने। हम सबों की मज़ाक उड़ाई है। पंडितों-सा त्रिपुंड, माला, केशरिया बाना पहिनाया है शैतान को। और मूंछ बनाई हैं ऐंठदार ठाकुरों जैसी। और.....और आपने टोपी देखी उसके सिर पर? बिलकुल आपकी टोपी के रंग की। आपकी पार्टी की टोपी रख दी है सफाचट सिर पर। पुतला टोपी समेत ही जलाया जावेगा। है तौहीन कि नहीं?" ठाकुर मज़बूतसिंह उबलता हुआ नेता सीताराम जी से बोला।

नेता सीताराम जी ने अपनी टोपी उतारकर हाथ में ले ली। एक नज़र अपनी टोपी पर डाली, फिर पुतले के सिर की टोपी का रंग मिलाया, तो रंग मिलता नज़र आया। आजकल वैसे ही उनकी पार्टी की बेइज़्ज़ती हो रही थी, पर मुहल्ले पर नेता जी का रंग अभी चढ़ा हुआ था। उनका पारा भी चढ़ा, पर चतुर खिलाड़ी आदमी थे। नम्रता से बोले, "भाइयो यह तो अच्छी बात नहीं। लड़कों ने क्या सबका मज़ाक उड़ाने का इरादा कर पुतला बनाया है। पंडित, ठाकुर इज़्ज़तदार आदमी हैं। हमारी पार्टी भी जनता की सेवक है। ऐसा मज़ाक अच्छा नहीं। भगवानदास, तुम्हें लड़के को समझाना चाहिए था। क्यों सेठ जी?"

अपना नाम सुनकर सेठ जी चौंके। वह अभी तक कई बार अपने पेट की तुलना पुतले के पेट से कर चुके थे। पर कुछ तय नहीं कर पा रहे थे कि पेट पुतले का बड़ा है या उनका। बार-बार जोड़ घटा रहे थे कि सीताराम जी की आवाज़ कानों से टकराई "हां, हां, ठीक ही तो कह रहे हो, नेता जी। बखत पर चंदा मांगने हमारे ही पास आते हैं। और मज़ाक भी हमीं लोगों की उड़ाई जा रही है।" सेठजी भी मौक़ा देख गर्म हो उठे।

"हम अभी सभी को ठीक किए देते हैं। इन लड़कों के कान खींचकर दो-दो रापट ऐसे लगाए देते हैं कि दिन में तारे नज़र आ जावें।" कहता हुआ ठाकुर लड़कों की ओर बढ़ा।

"ठहरो, ठाकुर साहब! क्यों इतने नाराज़ हो रहे हो बच्चों पर?" मास्टर प्रशांत ने आगे बढ़कर ठाकुर को रोक लिया। पता नहीं वह कब आ गए थे।

ठाकुर रुक गया। मुड़ते हुए बोला, "मास्टर जी इन लड़कों की शैतानी तो देखिए इज़्ज़तदार आदमियों की भी हंसी उड़ाने लगे हैं। पंडित जी, नेता जी, सेठ जी सभी को बुरा लगा है इनकी हरक़त का।"

"भाई, यह तो पुतला भर दिखाई देता है। इसमें आप लोग अपना-अपना चेहरा क्यों देख रहे

हैं? इसे देखकर तो हंसना चाहिए। पर आप लोग भड़क रहे हैं।'' मास्टर साहब मुस्कराते हुए बोल रहे थे।

''पर मास्टर साहब, इस पुतले में इन लोगों ने ऐसे चिह्न बनाय दीने हैं कि हम सबन की मज़ाक हुई गई है।'' पंडित जी ने मिनमिनाते हुए कहा।

''अरे पंडित जी, आप भी विद्वान होकर ऐसी नासमझी की बात कर रहे हैं होली का त्यौहार ही हंसी मज़ाक का होता है। पुतले के चिह्न तो प्रतीक समान हैं पाखंड, दिखावे के धर्म के। ऐंठी मूंछें घमंड और व्यर्थ की अकड़ बता रही हैं। टोपी से कहीं पार्टी की इज़्ज़त बनती-बिगड़ती है? और बड़ा पेट तो गणेश जी का भी है। मथुरा के चौबों का भी होता है। इसमें बुरा मानने की क्या बात है?'' मास्टर जी ने मुस्कराते हुए कहा।

''हां हां, मास्टरजी! बात तो आप सही कह रहें हैं। बाबा तुलसीदास भी कह गए हैं-जाकी रही भावना जैसी प्रभू मूरत देखी तिन जैसी।'' पंडित जी ने पलटी खाई।

''हां, यही बात है, पंडित जी। कहते हुए मास्टर जी ने पंडित को देखा और फिर बच्चों की तरफ देखकर मुस्कराते हुए धीरे से आंख का इशारा किया। बच्चों के मुरझाए चेहरे खिल उठे। मास्टर जी ने वक्त पर आकर बात संभाल जो ली थी।

"तो आप सब लोग भी आइए रात को इस होली के हौवा को जलाने।" मास्टर जी ने सीताराम जी और ठाकुर से कहा।

"हां, हां, ज़रूर आएंगे।" सब एक स्वर में बोले।

शाम ढलते ही होली जलने के स्थान पर ढोल और ताशे बजने लगे। मुहल्ले भर के बच्चों की भीड़ जमा हो गई। रात को बड़ी धूमधाम से होली जलाई गई। पंडित जी ने मंत्रोच्चार किया, नेता जी ने अग्नि प्रज्वलित की। ठाकुर ने बड़े ज़ोर से 'होलीमाता की जय' का नारा लगाया जिसे सभी लोगों ने उत्साह से दुहराया। होली का हौवा लपटों में भस्म हो गया। मोहन, दीपक, अकबर, हरीश, पीटर, राकेश सब एक दूसरे के माथे पर गुलाल मल रहे थे और हंसते हुए गले मिल रहे थे। सेठ छदामीलाल ने ग्यारह रुपए चंदे में दिए थे जिनसे प्रसाद ख़रीदकर बांटा जा रहा था।

होली की ज्वाला हिल-हिलकर झूम रही थी और आकाश में पूर्णिमा का चांद खिलखिलाकर हंस रहा था।

❑ हरिकृष्ण तैलंग

माथापच्ची : उत्तर फरवरी अंक के

1. चित्र को ध्यान से देखो। ऊपर जो बड़ा-सा पहिया जंजीर से लटका हुआ है, वह शक्तिशाली चुंबक है। उसी चुंबक के कारण व्यक्ति जंजीर पर अधर में लटका है।

2. 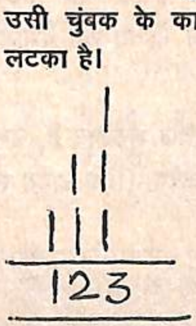

3. 398+399+400+401+402=2000

4. ब.

5. क=6 तथा ख=1.

6. $22+\frac{2}{2}=23$, $44+\frac{4}{4}=45$
और $999+\frac{9}{9}=1000$

7. 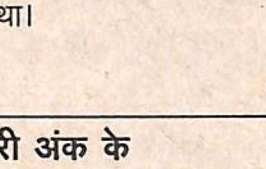

8. चित्र में लड़की है और दिखाने वाला उसका पिता है।

9. 800 वर्ग मीटर

वर्ग पहेली-
10 का हल

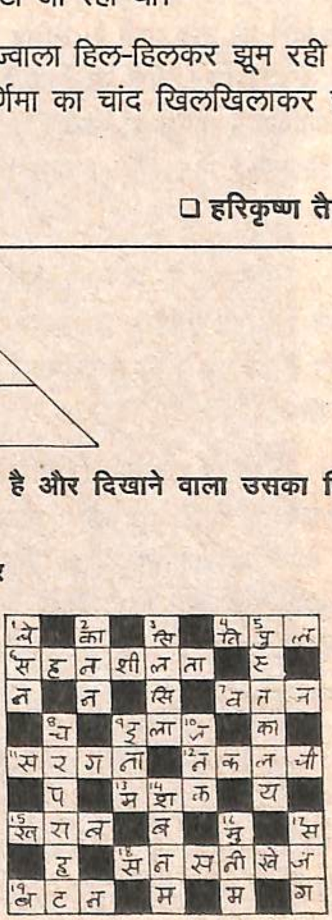

संकेत बाल-नाट्य समारोह

15 मार्च प्रतिवर्ष विश्व विकलांग दिवस के रूप में मनाया जाता है। हममें से ज़्यादातर लोगों को केवल इसी दिन विकलांगों की याद आती है। लेकिन ज़रूरत इस बात की है कि अन्य सामान्य लोगों की तरह वे भी हमारी रोज़मर्रा की गतिविधियों में शामिल हों, उनका केंद्र बनें। हम भी उनके बारे में सिर्फ़ एक दिन नहीं हर दिन सोचें, उनके सुख-दुख में शामिल हों।

भोपाल में मूक-बधिर बच्चों के लिए एक स्कूल है- आशा निकेतन। इसमें न केवल ऐसे बच्चों की चिकित्सा की जाती है बल्कि उन्हें समाज का महत्वपूर्ण अंग बनाने का प्रयत्न भी होता है।

भोपाल की चिल्ड्रनर्स थियेटर अकादमी ने स्कूल के मूक-बधिर बच्चों के साथ अपना समय लगाया और चार माह की तैयारी के बाद चार नाटक तैयार किए। ये नाटक 25 जनवरी, 92 की शाम भोपाल के रवीन्द्र नाट्यगृह में आयोजित संकेत बाल नाट्य समारोह में दर्शकों के सामने मंचित किए गए।

नाटकों का निर्देशन प्रेम गुप्ता ने किया। उन्होंने बच्चों के साथ रहकर पहले उनके बोलचाल की भाषा और तरीक़ा सीखा और फिर उन्हीं की भाषा में उन्हें नाटकों की बुनियादी बातें समझाईं। हालांकि वे पहले भी सागर तथा इंदौर में ऐसे ही बच्चों के साथ काम कर चुके हैं।

जिन नाटकों का मंचन किया गया, वे थे- रंगों का आकार, झांसी की रानी, एकलव्य का दान तथा जीवन और जंगल।

चारों ही नाटकों में जो मुख्य बात थी, वह यह कि बच्चे संगीत की रिद्‌म पर अभिनय कर रहे थे। सारे बच्चों के कदम एक साथ संगीत की ताल पर सही-सही उठते देखकर सचमुच आश्चर्य होता है। क्योंकि ये बच्चे सुन नहीं सकते थे। असल में बच्चों को संकेत भाषा द्वारा ताल पर नृत्य और अभिनय करना सिखाया गया था। इसके पीछे नाटकों की सहायक निर्देशक वैशाली गुप्ता की मेहनत थी। वैशाली स्वयं एक बैले ट्रुप में नर्तकी हैं।

निश्चित ही यह एक सार्थक शुरुआत है, उम्मीद है अन्य लोग भी इस दिशा में पहल करेंगे। (चित्र नाट्य समारोह की एक प्रस्तुति का है।)

इस अंक से हम चकमक समाचार का यह पन्ना शुरु कर रहे हैं। शुरुआत भोपाल के एक समाचार से हो रही है। तुम्हारे आसपास बच्चों से संबंधित अगर ऐसी कोई गतिविधि होती है, तो चकमक को लिख भेजो। हम उसे यहां प्रकाशित करेंगे।

सवालीराम

■ *नाख़ून कैसे बढ़ते हैं?*

□*घनश्याम सिंह राजपूत, इटारसी*

□ तुम्हें यह जानकर शायद आश्चर्य होगा कि नाख़ून वास्तव में हमारी त्वचा से पैदा होते हैं। नाख़ून और बाल दोनों ही त्वचा के हिस्से हैं और त्वचा की सतह से बाहर की ओर निकले रहते हैं। अपने सवाल पर बात करने से पहले ज़रा यह देखें कि नाख़ून की रचना कैसी होती है। अपनी उंगली के किसी नाख़ून को ध्यान से देखो। नाख़ूनों की जड़ें त्वचा के भीतर होती हैं। अच्छी तरह विकसित नाख़ून में दो हिस्से एकदम साफ़ दिखते हैं। आमतौर पर पूरा नाख़ून उसके नीचे की त्वचा के कारण गुलाबी - सा दिखता है, लेकिन इसके निचले सिरे पर एक अर्धचंद्राकार सफ़ेद हिस्सा भी होता है। इसे लुनूल कहा जाता है। वास्तव में नाख़ून के इसी हिस्से में वृद्धि होती है और बाक़ी का नाख़ून सिर्फ़ आगे की ओर खिसकता रहता है।

नाख़ून के नीचे का ऊतक नखशय्या (नेल बेड) कहलाता है। यह नाख़ून के विकास में कोई योगदान नहीं देता, पर नाख़ून को आगे खिसकने के लिए एक सपाट आधार प्रदान करता है। लेकिन नखशय्या का जो हिस्सा लुनूल के नीचे होता है वही नाख़ून को बनाता है। इस हिस्से में ऊतक की कोशिकाएं लगातार विभाजित होती रहती हैं। जैसे-जैसे इनकी संख्या बढ़ती जाती है, नाख़ून की जड़ के पास की कोशिकाएं एक दूसरे में ठसकर बहुत पतली समतल पट्टी में बदलती जाती हैं। ये पट्टियां ही एक के ऊपर एक जमा होकर नाख़ून बनाती हैं।

वैसे नाख़ून लगातार बढ़ते रहते हैं। लेकिन गर्मियों की अपेक्षा ठंड के दिनों में इनकी वृद्धि धीमी गति से होती है।

■ *मकड़ी ख़ुद अपने जाल में क्यों नहीं फंसती?*

□*राहुल नैथानी, दिल्ली*

□ मकड़ी अपने जाल की ही तरह एक अद्भुत जीव है। मकड़ी हर तरह की आबोहवा में पाई जाती है। मकड़ी हवा, पानी, ज़मीन यहां तक कि ज़मीन के नीचे भी पाई जाती है। वैसे ज़्यादातर मकड़ियां एक साल तक ज़िंदा रहती हैं, लेकिन टैरन्ट्यूला नाम की एक बड़ी मकड़ी लगभग पंद्रह साल तक ज़िंदा रहती है। यह मकड़ी पक्षियों का शिकार करती है।

जाला बुनने के लिए मकड़ी जिस धागे का इस्तेमाल करती है, वह उसके पेट में स्थित कुछ विशेष ग्रंथियों में उत्पन्न होने वाले तरल रसायन से बनता है।

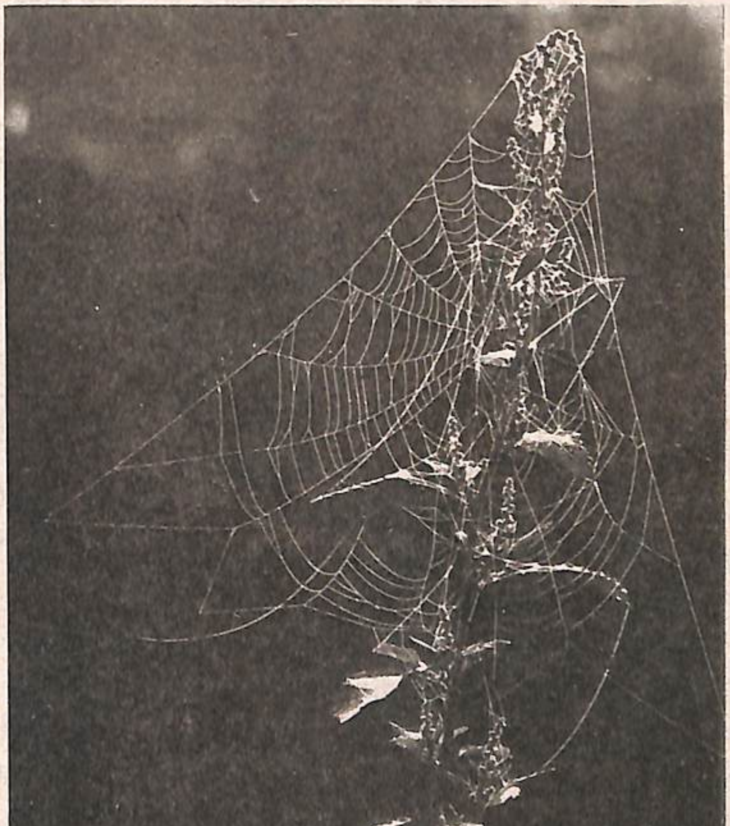

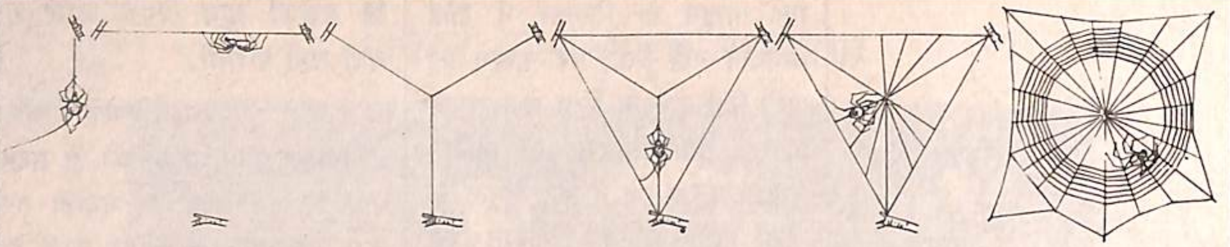

यह रसायन पेट के सिरे पर स्थित तंतु-ग्रंथियों के महीन छिद्रों से द्रव के रूप में निकलता है पर सूखकर रेशे में बदल जाता है। वास्तव में ये रेशे दो तरह के होते हैं। चिपकने वाला और न चिपकने वाला। चिपकने वाले रेशे का इस्तेमाल मकड़ी शिकार पकड़ने के लिए करती है। जब वह जाला बुनती है तो उसमें न चिपकने वाले रेशों के बने कुछ 'सुरक्षित'रास्ते छोड़ देती है। आमतौर पर मकड़ी इन्हीं सुरक्षित रास्तों पर अपने जाल में इधर से उधर आती जाती है। न चिपकने वाले इस रेशे की बदौलत ही मकड़ी अपने जाल में फंसने से बची रहती है। इस रेशे का उपयोग जाले को मजबूती प्रदान करने के लिए भी किया जाता है। (चित्र में देखो, मकड़ी कैसे अपने जाले को बनाना शुरू करती है।)

□□□

(शेष पृष्ठ 18 का)

और पुरुष उन्हें चुराते हैं। दोनों लड़ाई का स्वांग रचते हैं। अंत में सब मिलकर मिठाई खाते हैं।

होली की चर्चा हो और ब्रज की होली का ज़िक्र नहीं हो तो बात कुछ आधी-अधूरी लगेगी। ब्रज की होली बहुत प्रसिद्ध है। मथुरा के आसपास का इलाका ब्रजभूमि कहलाता है। कहते हैं यहीं कृष्ण का बचपन अपने संगी-साथियों के साथ बीता। यह मान्यता है कि कृष्ण और उनके संगी-साथी ख़ूब होली खेलते थे-सो आज भी ब्रज में होली बड़े धूमधाम से मनाई जाती है। यहां होली एक-दो दिन नहीं बल्कि कई दिनों तक मनाई जाती है। हर तरफ होली की धूम मची रहती है।

ब्रजभूमि की नंदगांव और बरसाने की लट्ठमार होली भी उतनी ही मशहूर है। नंदगांव के पुरुष रंग खेलने के लिए बरसाना पहुंचते हैं जहां महिलाएं लाठियों से उनका स्वागत करती हैं। पुरुष रंग डालने की कोशिश करते हैं और मार खाते हैं। ऐसी ही होली ब्रजभूमि के बलराम मंदिर में भी खेली जाती है। मंदिर में जमा महिलाओं पर जब पुरुष रंग डालने का प्रयास करते हैं तो महिलाएं उनके कपड़े फाड़कर उनका कोड़ा बनाकर उससे पिटाई लगाती हैं।

बहरहाल, होली मनाने के पीछे जो भी कारण पहले रहे हों, अब सब गड्ड-मड्ड हो गए हैं। कहने को आज भी होली उल्लास का पर्व माना जाता है लेकिन आज मनाई जाने वाली होली पर जब नज़र डालते हैं तो यह उल्लास बस कहीं- कहीं ही दिखता है। जैसे होली पर अश्लील मज़ाक, अपशब्द कहना और हल्की-फुलकी छेड़छाड़ का बुरा नहीं माना जाता है। कहा जाता है, 'बुरा न मानो होली है।' कहते हैं कि साल भर तो समाज के कायदे-कानूनों में बंधकर रहना ही होता है, कभी एक दिन ऐसा भी मिले जब इन बंधनों को भुलाकर मनमानी कर सकें। लेकिन कहीं-कहीं यह मनमानी इतनी अधिक बढ़ जाती है कि वह होली के बजाए हुड़दंग बन जाती है। गांवों में भले ही होली में अभी भी शालीनता बाकी हो, लेकिन शहरों में होली का जो स्वरूप हो गया है, उसके चलते बहुत से लोग तो अपने को घर में बंद रखना ही बेहतर समझते हैं।

कहते हैं कि होली आपसी द्वेष, घृणा और झगड़ों को भूल जाने का पर्व है। पर आज तो ऐसा नहीं लगता, काश कि ऐसा सचमुच होता!

(सी.एन. सुब्रह्मणयम और अंजली नरोन्हा द्वारा जुटाई गई सामग्री पर आधारित। फोटो : श्री आर.पी.नरोन्हा; म.प्र. आदिवासी लोककला परिषद तथा बिम्ब स्टूडियो, भोपाल के सौजन्य से)

मछली बनाओ

हर अंक में हम तो कुछ न कुछ बनाना बता रहे हैं। पर कभी-कभी यह लगता है कि यहां दिए चित्र और उनके विवरण से कुछ समझ में भी आता है या नहीं!

अगर तुमने इस स्तंभ को देखकर कुछ चीज़ें बनाई हैं, तो हमें अपने सुझाव, दिक्कतें लिखो ताकि इस स्तंभ को और उपयोगी बनाया जा सके!

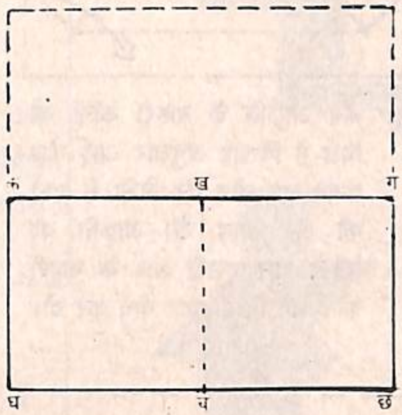

1. एक वर्गाकार कागज़ लो। उसे रुमाल की तरह चार तहों में घड़ी करो। अब एक घड़ी खोल लो और चित्रानुसार नाम दे दो।

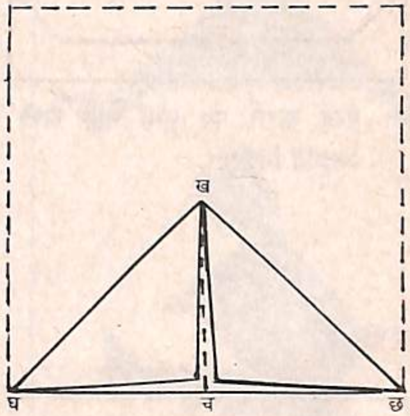

2. अब **क** और **ग** सिरों को खाई मोड़ बनाते हुए **च** बिंदु पर लाओ। ऐसा करने से तुम्हें **ख क घ** और **ख ग छ** दो त्रिभुज मिलेंगे। ये त्रिभुज दोहरी परतों के होंगे।

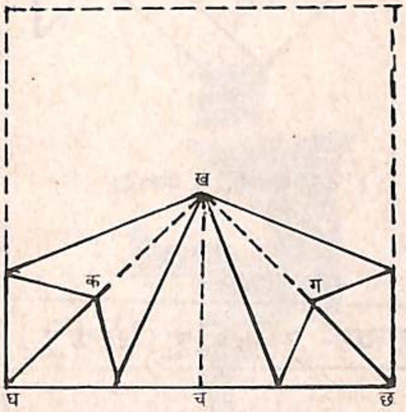

3. अब **क ख घ** त्रिभुज की परतों के बीच उंगली या अंगूठा डालकर फुलाओ और फिर **क** बिंदु को इस तरह नीचे दबाओ कि **ख क** और **घ** बिंदु एक सरल रेखा में आ जाएं। इसी तरह दूसरे त्रिभुज को फुलाओ और **ग** बिंदु को इस तरह नीचे दबाओ कि **ख ग** और **छ** बिंदु एक सरल रेखा में आ जाएं।

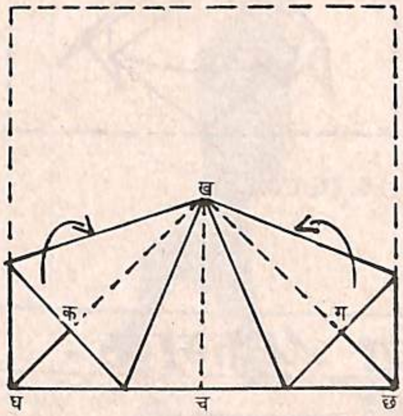

4. इस तरह प्राप्त दोनों चतुष्कोणीय आकृतियों को **ख क घ** और **ख ग छ** सरल रेखाओं पर पहाड़ी मोड़ बनाते हुए पीछे की (तीर की दिशा में) ओर मोड़ो।

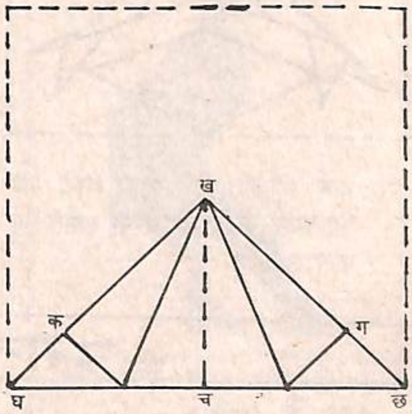

5. तुम्हें इस तरह की आकृति मिलेगी। अब **घ च छ** भुजा को **क ग** भुजा पर खाई मोड़ बनाते हुए ऊपर की तरफ मोड़ो। आकृति को पलट दो और इस ओर के निचले हिस्से को भी ऊपर की तरफ मोड़ दो।

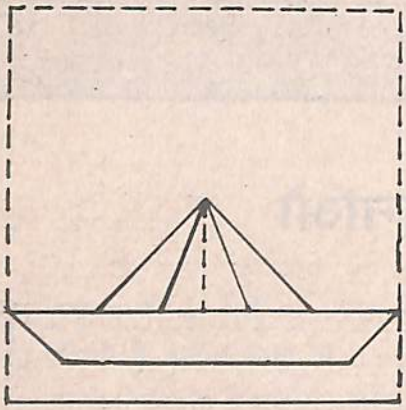

6. ऐसा करने पर तुम्हें नाव जैसी आकृति मिलेगी।

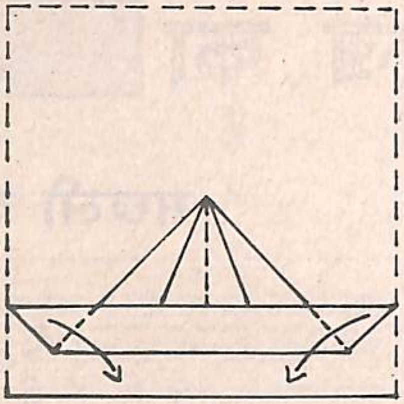

7. अब आकृति के बाहरी कोनों को चित्र में दिखाए अनुसार खाई मोड़ बनाते हुए तीर की दिशा में नीचे की ओर मोड़ दो। आकृति को पलटो और दूसरी ओर के बाहरी कोनों को भी मोड़कर नीचे कर दो।

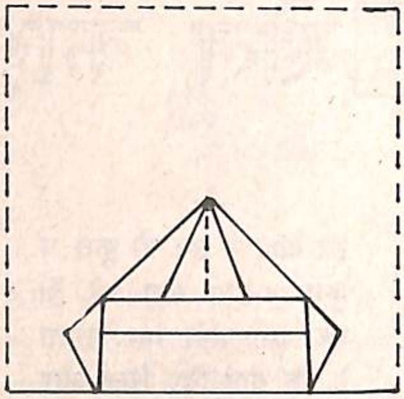

8. इस तरह की आकृति मिलेगी।

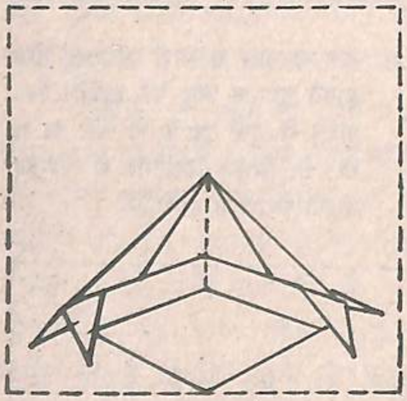

9. अब आकृति के दोनों सिरों को पकड़कर अंदर की तरफ दबाते हुए पास लाओ।

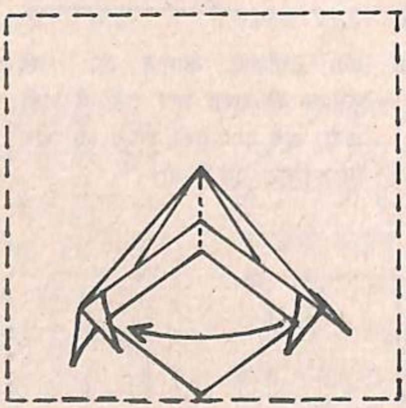

10. इस तरह।

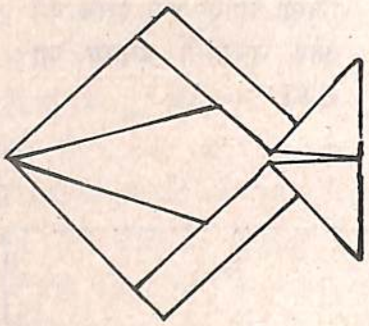

11. देखो बन गई न मछली!

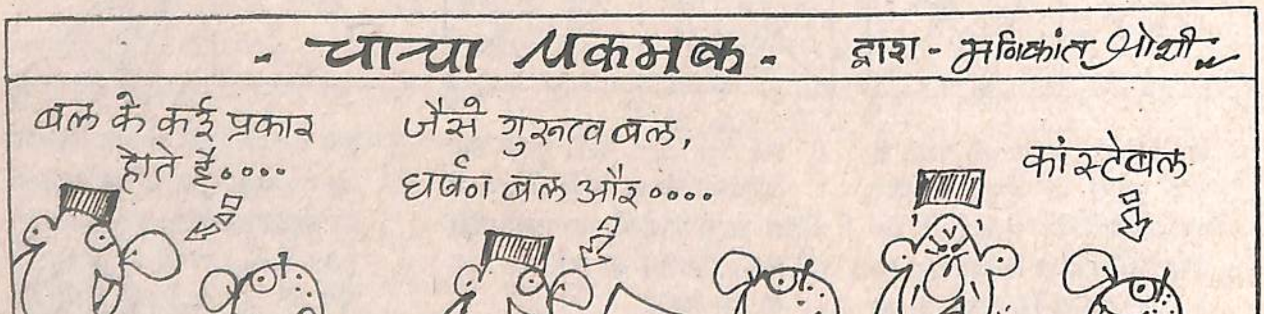

खेल पहेली

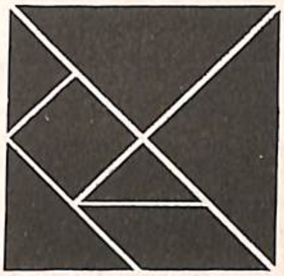

टेनग्राम के इन सात टुकड़ों को जोड़कर यहां दी गई विभिन्न आकृतियां बनी हैं। तुम भी बना देखो। (हल अगले अंक में)

फरवरी, 92 अंक के हल

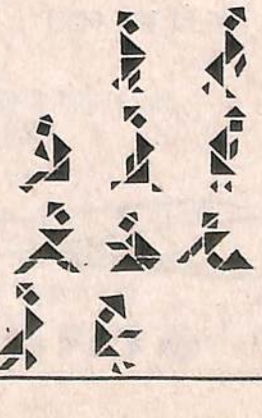

माथापच्ची

(1)

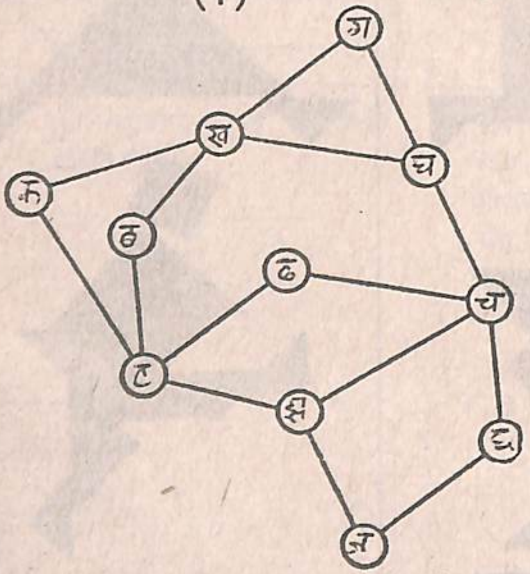

इन गोलों में अक्षरों के स्थान पर 1 से 11 तक की संख्याएं भरना है। संख्याएं जैसे चाहो, वैसे भर सकते हो। बस हमारी एक ही शर्त है, जब आपस में जुड़े कोई भी तीन गोलों का योग किया जाए तो उत्तर में जो संख्या मिले वह 6 से लेकर 30 तक की संख्याओं में से कोई एक होनी चाहिए। उदाहरण के लिए क+ख+ग का जोड़ या ख+ग+घ का जोड़ या घ+च+ठ का जोड़ 6 से 30 तक की संख्याओं में से होना चाहिए। आपस में जुड़े तीन-तीन गोलों के ऐसे जोड़े बनाकर 6 से 30 तक की शेष संख्याएं भी तुम्हें प्राप्त करनी हैं। यह भी ध्यान रहे कि एक संख्या एक ही बार आए।

(2)

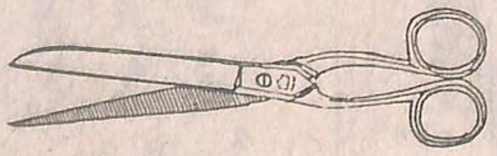

इस कैंची में क्या गड़बड़ है?

(3)

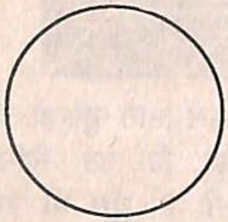

इस गोले को चार सरल रेखाएं खींचकर ग्यारह भागों में बांटो तो जाने!

(4)

एक साधारण पोस्टकार्ड को काटकर तुम कितना लंबा कर सकते हो?

(5)

1987 की पहली जनवरी को यदि सोमवार था तो, उस साल कुल कितने सोमवार पड़े होंगे?

सोचकर जवाब दो!

1. ***दो*** लगातार ऐसे महीनों के नाम बताओ जिनमें 31-31 दिन होते हैं। जैसे जुलाई-अगस्त।
2. ***4*** मीटर गहराई, 3 मीटर लंबाई और 2 मीटर उंचाई वाले गढ्डे में कितनी मिट्टी होगी?
3. ***एक*** आदमी को एक आंख से चार कुत्ते दिखाई देते हैं तो दो आंख से कितने दिखेंगे?
4. ***मालती*** ने पहले मुट्ठी बांधी और फिर चुटकी बजाई तो शेष कितने बचे?
5. ***हम*** चार भाई हैं और चारों की एक-एक बहन है तो हम कुल कितने भाई-बहन हुए?
6. ***यह*** कैसे और कहां संभव है कि 19 में से अगर एक हटा दें तो शेष 20 रह जाए?

(6)

एक आदमी को चांदी का एक सिक्का मिला। आदमी का कहना था सिक्के पर 120 ई.पू. लिखा हुआ है। बताओ वह सिक्का चुराया गया है या आदमी झूठ बोल रहा है।

(7)

पुस्तक, कापी और कलम को एक सीधी पंक्ति में रखना है! बताओ कितने विभिन्न तरीक़ों से उन्हें रखा जा सकता है?

(8)

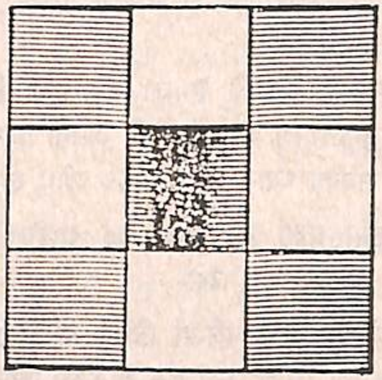

पता करो इसमें कुल कितने वर्ग हैं?

वर्ग पहेली-11

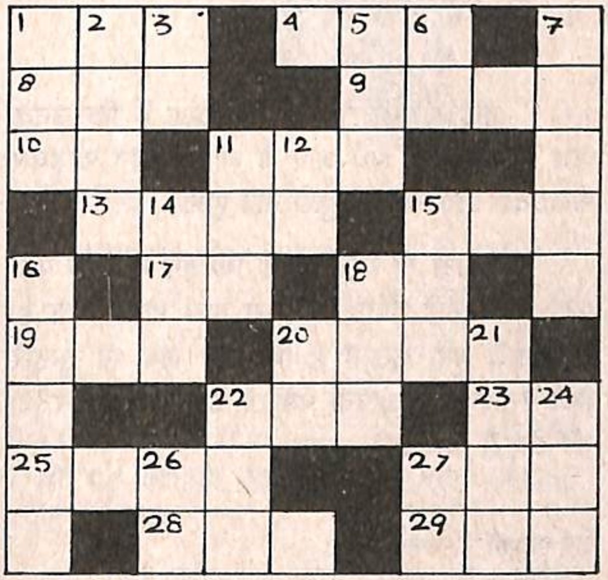

संकेत : बाएं से दाएं

1. छोटी टहनी (3)
4. जगर की गड़बड़ में तेज़ आवाज़ (3)
8. उन्नति (3)
9. समाप्ति या परदा गिरना (4)
10. कायर का पेट काट दो (2)
11. विद्युतधारा (3)
13. नायक में अगर आधा लाला मिल जाए तो किसी काम का नहीं (4)
15. हरी धान से बनने वाला व्यंजन (3)
17. वानर का अगर सिर न हो। (2)
18. मदिरा (2)
19. ख़ाली (2)
20. अगर दूजा कोई गड़बड़ करे (4)
22. ....ब्योंत के आगे क्या आएगा (3)
23. जिस पर चाकू-छुरियां तेज़ की जाती हैं (2)
25. पाकिस्तान के एक मशहूर क्रिकेट खिलाड़ी का आधा नाम (4)
27. आंख (3)
28. प्रणाम (3)
29. प्रमाण पत्र (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. कवि के पीछे आधा कान माने एक मछली (3)
2. न मानना (4)
3. जो आम न हो (2)
5. काई पर पांव पड़े तो......सकते हैं (3)
6. गुथे लिपटे बाल (2)
7. असावधानी (5)
11. नारियल की रस्सी को मलयालम भाषा में कहते हैं (3)
12. ग़रीब (2)
14. तिरस्कार पूर्ण बात (3)
15. अंधेरा किसके तले होता है? (3)
16. मेहनताना (5)
18. बहुत दूर (3)
20. साधू से क्या नहीं पूछना चाहिए? (2)
21. पदार्थ का तत्वज्ञान (4)
22. कम के बीच आधा दम (3)
24. तुम्हारे पिता की बहन, तुम्हारी मां की क्या हैं? (3)
26. ख़ैरात (2)
27. ख़ून जिन नलियों में बहता है (2)

(अनिल गर्ग, कक्षा आठ, पटियाला द्वारा भेजी गई वर्ग पहेली पर आधारित।)

क्यों..क्यों..18

कौआ एक ऐसा पक्षी है जो हर कहीं दिखाई दे जाता है। काले रंग का यह पक्षी अपनी कांव-कांव से जल्द ही सबका ध्यान अपनी ओर खींच लेता है।

इस कौए के साथ कई सारी किवदंतियां मान्यताएं भी जुड़ी हैं, जैसे-

1. कहते हैं अगर कौआ किसी के सिर पर बैठ जाए या चोंच मारकर निकल जाए तो यह समझा जाता है कि उसके परिवार में किसी की मौत होने वाली है।
2. कौआ जब घर के सामने या छत पर बैठकर बोलता है तो समझा जाता है कि कोई मेहमान आने वाला है।
3. कहते हैं कि कौआ काना होता है।

तुम्हारा क्या ख्याल है? तुम क्या सोचते हो? क्यों ये मान्यताएं प्रचलित हैं और बेचारे कौए के बारे में ही क्यों? अपने उत्तर हमें 15 मई, 92 तक लिखकर भेज सकते हो!

क्यों.. क्यों.. 13 का निष्कर्ष

क्यों.. क्यों.. 13 में जो सवाल पूछा गया था, वह शायद तुम्हें याद होगा। सवाल था कि कभी-कभार कुछ ऐसी चिट्ठियां/पर्चे बंटते हैं जिनमें लिखा होता है कि अगर इन्हें पढ़ने वाला व्यक्ति इन चिट्ठियों की प्रतियां लिखकर या पर्चे की प्रतियां छपवाकर नहीं बंटवाएगा तो उसका कुछ न कुछ नुकसान हो जाएगा।

हमने पूछा था कि यह सब क्यों किया जाता है? कौन लोग करते हैं? और आख़िर इससे क्या फ़ायदा होता है? किसे फ़ायदा होता है।

उत्तर में जो पत्र आए हैं उन सबमें एक स्वर में यह लिखा है कि इन चिट्ठियों या पर्चों से कुछ नहीं होता है। ये सब लोगों को भ्रमित करने और ठगने के तरीक़े हैं। इससे तो सिर्फ़ ज़्यादा से ज़्यादा प्रेस वालों को ही फ़ायदा होता होगा। क्योंकि लोग उनके पास पर्चे छपवाने पहुंचते होंगे।

ध्यान रहे यह ज़रूरी नहीं है कि हर पुरानी प्रथा, परंपरा या रीतिरिवाज़ दक़ियानूसी ही हो, उसके पीछे कोई तार्किक आधार भी हो सकता है। आधार एक या एक से अधिक भी हो सकते हैं। पर यह भी आवश्यक नहीं है कि हर परंपरा या प्रथा के पीछे आधार होगा ही।

कई पाठकों ने यह भी लिखा है कि उनके पास भी ऐसे पत्र/ पर्चे आए थे और उन्होंने फाड़कर फैंक दिए। लेकिन उन्हें कुछ नहीं हुआ।

हमारा भी यही मत है कि इन पत्रों के पीछे कोई वजह नहीं होती। न इनसे कुछ होता-जाता है। तो हमारी यही सलाह है कि अब जब भी तुम्हारे हाथ ऐसा कोई पत्र/पर्चा पड़े तो उसे फाड़कर रद्दी की टोकरी के हवाले करना।

इन पाठकों ने जवाब भेजे :

मनोज कुमार मिश्र, पूरेनेपाल मिश्र, फैज़ाबाद। सुधांशु वर्मा, चिरैंधापुर, फैज़ाबाद। गजराज, हरदोई। **सभी उत्तर प्रदेश**। सुगनराम गौड़, पंकज चौहान, ललित भाटी, उत्तमचंद गौड़, मनमोहन चौधरी, मोतीलाल मेधवाल, प्रेमसिंह देवड़ा, देसूरी, पाली। रघुनाथ सिंह राठौर, भवानी सिंह राठौर, घाणेराव, पाली। **सभी राजस्थान**। अजयकुमार तिवारी, श्रीनगर, नरसिंहपुर। मुकेश कुशवाहा, जयनारायण विश्वकर्मा, नर्मदा विश्वकर्मा, सुनील विश्वकर्मा, अजय नारायण, अमित कुमार, करकटी, शहडोल। कुबेर शरण द्विवेदी, छपड़ौर, शहडोल। राधेश्याम यादव, बेलसोंडा, रायपुर। मनीष कुमार, पीपलरांवा, देवास। महेंद्र तिवारी हाटपीपल्या, देवास। आशीष दलाल, खरगोन। महेश सिंह पवार, टोड़ी, इंदौर। दुर्गेश बिल्लौरे, सत्येंद्र सिंह रघुवंशी, हरदा। कुमारी चंद्रा, कराहल। **सभी मध्यप्रदेश**।

बसंता

छोटा बसंता

बड़ा बसंता

जनवरी का महीना आते-आते एक ऐसी आवाज़ हमारे आसपास सुनाई पड़ने लगती है मानो कोई ठठेरा हथौड़े से बर्तन पीट रहा हो। जैसे-जैसे ठंड कम होती जाती है और गर्मी बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे यह आवाज़ तेज़ होती जाती है और अधिक समय तक सुनाई पड़ने लगती है। भरी गर्मी में तो यह आवाज़ सुबह से शाम तक लगातार सुनाई पड़ती है।

किंतु यदि तुम यह देखने की कोशिश करोगे कि आवाज़ कहां से आ रही है, तो चक्कर में पड़ जाओगे। कभी यह दांई ओर से सुनाई देगी तो कभी बांई ओर से। कभी आगे से सुनाई पड़ेगी तो कभी पीछे से। और इस आवाज़ को करने वाले ठठेरे महाशय? वे तो इतने छोटे होते हैं कि उन्हें देख पाना ही कठिन होता है। गौरेया के क़द के इस पक्षी को **छोटा बसंता** कहते हैं। इसके शरीर का ऊपरी भाग हरा और निचला भाग हल्के पीले रंग का होता है। इसके सिर और सीने पर लाल रंग होता है। नर और मादा के रंगरूप में कोई अंतर नहीं होता।

छोटा बसंता पूरे समय पेड़ों पर ही रहता है। लेकिन अपने हरे रंग और छोटे आकार के कारण आसानी से दिखाई नहीं देता। जनवरी से जून तक तो इस पक्षी की आवाज़ ख़ूब सुनाई पड़ती है किंतु बरसात और ठंड के मौसम में यह बिलकुल चुप रहता है। शायद इसी कारण यह कहावत बनी है-

शरद, शिशिर, हेमंत मो, भये बसंता मौन।

अंग्रेज़ी में इस पक्षी के दो नाम हैं जो इसकी विशेषताएं दर्शाते हैं। एक तो **कॉपर स्मिथ** यानी तांबे के बर्तन बनाने वाला ठठेरा और दूसरा **क्रिमसन ब्रेस्टेड बारबेट** यानी लाल सीने वाला बसंता। इसका मुख्य भोजन फल है किंतु पीपल और बरगद के फल इसे विशेष रूप से पसंद हैं। कभी-कभार यह उड़ते हुए कीड़ों को भी पकड़ कर खा लेता है।

छोटे बसंता का प्रजनन काल जनवरी से जून तक होता है। नर और मादा मिल कर किसी पेड़ के तने या शाखा में एक सुरंग बनाते हैं जिसके अंत में एक कमरा होता है। इस कमरे में मादा तीन सफ़ेद अंडे देती है। अंडों को सेने और बच्चों का पालन-पोषण करने का काम नर और मादा दोनों मिल कर करते हैं।

भारत में बहुतायत से पाई जाने वाली बसंता की एक अन्य जाति है, **बड़ा बसंता।** इसे अंग्रेज़ी में **लार्ज ग्रीन बारबेट** कहते हैं। जैसा कि इसके नाम से पता चलता है यह आकार में बड़ा यानी लगभग मैना के बराबर होता है। इसके शरीर का ऊपरी भाग हरा होता है और सिर,गर्दन तथा सीना मटमैले रंग के होते हैं। इस कारण इसे देख पाना और भी कठिन होता है।

बड़ा बसंता के भोजन, घोंसला, प्रजनन काल आदि छोटा बसंता से मिलते-जुलते होते हैं किंतु इसकी आवाज़ अलग होती है। गर्मी के दिनों में इसकी कुटर्रु-कुटर्रु आवाज़ से जंगल गूंजता रहता हैं। इसकी इस आवाज़ के कारण इसे देश के भिन्न-भिन्न भागों में **कुटुमा, कुटरिंगा, कुटुरगा** आदि नामों से भी जाना जाता है।

❑ अरविंद गुप्ते

(चित्र सौजन्य : बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी)

सावधान!

होली के रंग नुकसान पहुंचा सकते हैं!

होली मौज-मस्ती और रंगों का त्यौहार है। बिना रंग के तो होली की कल्पना ही नहीं की जा सकती। कहते हैं कि होली के रंग मन का मैल धो डालते हैं। पर कहीं मन का मैल धोते-धोते ये रंग हमारे तन पर अपना दुष्प्रभाव तो नहीं छोड़ जाते?

पहले चंदन, टेसू, केसर, हल्दी, और नील से बने रंगों से होली खेली जाती रही है, जो संभवतः शरीर के लिए नुकसानदायक नहीं है। पर अब तो रंगों के नाम पर कृत्रिम रंग ही मिलते हैं। हालांकि कृत्रिम रंगों की खोज ज़्यादा पुरानी नहीं है।

जर्मनी के वान बायर ने 1883 में कृत्रिम रूप से नील बनाने में सफलता प्राप्त की। किंतु कृत्रिम रंग बनाने का वास्तविक श्रेय एक अंग्रेज़ विलियम एच. पार्किन को जाता है। आज 5000 से ज़्यादा क़िस्म के रंग कृत्रिम रूप से बनाए जा चुके हैं। अकेले लाल रंग के ही 2000 से अधिक शेड्स उपलब्ध हैं।

आजकल बाज़ार में आमतौर पर तीन तरह के रंग मिलते हैं। अम्लीय, क्षारीय और सरल रंग। अम्लीय रंग पक्के होते हैं जबकि क्षारीय रंग हल्के एवं उड़नशील। होली में तो सभी तरह के रंगों का उपयोग किया जाता है। पर यदि हल्के और उड़नशील रंगों का उपयोग किया जाए तो वह हमारी त्वचा को कम नुकसान पहुंचाएंगे।

वैसे हमारी त्वचा इतनी मोटी होती है कि पानी में घुले हुए रंग, उसमें से होकर अंदर तो नहीं पहुंच सकते, लेकिन उनमें मिली अशुद्धियों के कारण त्वचा को अवश्य नुकसान पहुंच सकता है।

इन कृत्रिम रंगों से हमारे शरीर पर घमोरियां, फफोले और फुंसियां हो सकती हैं। त्वचा छिल सकती है। गुलाल पानी के साथ मिलाकर इस्तेमाल करने पर नुकसानदेह हो सकता है। दूसरे कृत्रिम रंगों की तरह गुलाल भी त्वचा पर जलन पैदा कर सकती है। खुजली इसका पहला लक्षण है। और यदि इसका उपचार नहीं किया जाए तो त्वचा पर सफ़ेद-सफ़ेद दाने उभर आते हैं। इन दानों में मवाद पड़ जाने पर बहुत तकलीफ़ होती है। प्रभावित हिस्से पर धूप पड़ने से तकलीफ़ और बढ़ जाती है।

होली पर रंगों की तरह इस्तेमाल होने वाले ऑइल पेंट, ग्रीस तथा डामर हमारी त्वचा को सबसे अधिक नुकसान पहुंचाते हैं। फिर जब इन्हें शरीर से निकालने के लिए मिट्टी का तेल आदि इस्तेमाल किया जाता है तो नुकसान और बढ़ जाता है।

अब अगर होली खेलने निकले हैं तो होली के रंगों से तो बचा नहीं जा सकता। पर कुछ सावधानियां अवश्य बरत सकते हैं।

पहली बात तो यह है कि सिर्फ़ सूखा गुलाल वह भी कम मात्रा में इस्तेमाल करना चाहिए। हालांकि पसीना निकलने के कारण सूखे गुलाल का भी पेस्ट बनने लगता है, हमारी त्वचा आसानी से सोख लेती है।

यदि आंखों के आसपास, कानों के पीछे होंठ और गर्दन जैसे संवेदनशील हिस्सों पर रंग लग जाए तो उसी समय उसे पोंछ लेना ही बेहतर है। वरना उन्हें नुकसान पहुंच सकता है।

कुछ और सावधानियां भी रखी जा सकती हैं-

- चेहरे पर यदि गुलाल मली जा रही हो तो आंखें बंद कर लो।
- सूखे रंगों को नाक से दूर रखो।
- रंग लगने के बाद जितनी जल्दी हो सके उसे धो डालो।
- होली खेलने के पहले यदि शरीर पर तेल का लेप कर लो तो अच्छा रहेगा।
- होली खेलने के बाद हल्के गुनगुने पानी में थोड़ा-सा नमक डालकर नहाओ। पानी अधिक गर्म मत करना, वरना रंग छूटने की बजाय और अधिक पक्का हो जाएगा।

□□□

अजंता

पिछले अंक में तुमने अजंता की गुफाओं और उनमें बने चित्र आदि का एक संक्षिप्त परिचय पढ़ा था। इस बार हम बता रहे हैं अजंता के चित्रों में इस्तेमाल किए गए रंगों के बारे में।

जब से अजंता के चित्रों की खोज हुई है तब से ही उनमें उपयोग किए गए रंग भी चर्चा का केंद्र रहे हैं। यह हमेशा कौतूहल का विषय बना रहा है कि आख़िर ये ऐसे कौन-से रंग हैं जो लगभग दो हज़ार साल बाद भी कुछ समय पुराने ही लगते हैं और कुछ तो बिलकुल ताज़े। ये रंग कैसे बनाए गए होंगे, इन्हें किसने बनाया होगा?

तमिल के एक प्रसिद्ध उपन्यास 'शिवकाशी की शपथ' की कहानी में अजंता के रंगों के बारे में लिखा गया है। कहानी के अनुसार पल्लवकाल के दक्षिण भारत का एक चित्रकार अजंता के रंगों के ताज़ेपन का राज़ खोजता है। अपनी खोज के दौरान वह ढेर सारे प्रयोग करता है। उन दिनों दक्षिण में केवल फूल, पत्तियों और हल्दी तथा मंजीठ जैसे पेड़ों के विभिन्न अंगों से रंग बनाए जाते थे। मगर ये रंग कुछ वर्षों के बाद फीके पड़ जाते थे और उड़ भी जाते थे। चित्रकार चाहता है कि वह अजंता जाए और रंगों की जानकारी हासिल करे। मगर दोनों जगह अलग-अलग राज्य में थीं-तमिलनाडू पल्लवों के राज्य में और अजंता चालुक्यों के राज्य में। दोनों राज्यों के बीच युद्ध भी चल रहा था। उस चित्रकार ने बहुत कोशिशों के बाद, कठिनाईयों का सामना करके अंत में अजंता के रंगों का राज़ पता कर ही लिया। राज बहुत मामूली-सा था।

राज यह था कि फूल और पत्ते तो सूखकर नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए उनका रंग भी उड़ जाता है। लेकिन अगर रंग ऐसी चीज़ों से ही बनाए जाएं, जो ख़ुद भी आसानी से ख़त्म नहीं होते, जैसे पत्थर या धातु तो शायद उनसे बने रंग भी ख़त्म न हों। वास्तव में अजंता के रंग खनिजों से बने थे। इसीलिए वे आज भी कुछ समय पुराने ही लगते हैं।

चित्रों में लाल रंग के लिए गेरू, पीले के

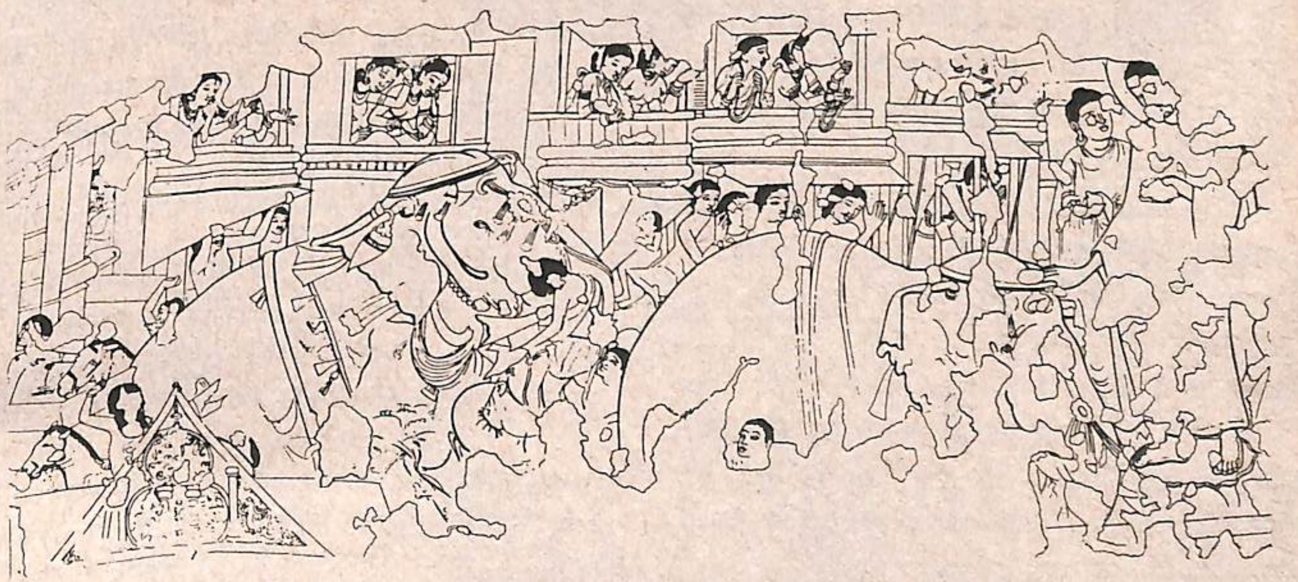

बुद्ध के चमत्कार को चित्रित करने वाला चित्र आज बहुत बुरी हालत में है। जगह-जगह से उसके रंग उखड़ गए हैं। चित्र कितना सुंदर रहा होगा इसकी सिर्फ़ कल्पना ही की जा सकती है।

राजा का हाथी मस्त होकर नगर की सड़कों पर निकल आया है और तबाही मचा रहा है। लोग घबराकर तितर-बितर हो रहे हैं। घर के दरवाज़े-खिड़कियां बंद कर रहे हैं। छज्जे से झांक रहे हैं। ऐसे में बुद्ध आते हैं–उन्हें देखकर हाथी शांत हो जाता है, और उनके पैरों में झुककर प्रणाम करता है। चित्र को ध्यान से देखो। बुद्ध हाथी को शांत करते हुए अपने हाथ से उसके मस्तक को छू रहे हैं।

लिए प्योढ़ी (पीला पत्थर) और सफ़ेद के लिए चूने का उपयोग किया गया है। ये आसपास के पहाड़ों से मिल जाते थे। इन्हें पीसकर गोंद के साथ मिलाकर चित्र बनाने के लिए तैयार किया जाता था। नीले रंग के लिए एक ख़ास पत्थर अफ़गानिस्तान से बुलवाया जाता था। इस पत्थर को लेपिज़ लजूली कहा जाता है। पत्थर बाहर से बुलवाने के कारण संभवत: मंहगा पड़ता था, इसलिए इसका उपयोग भी सीमित था। लेकिन कम मात्रा में होते हुए भी चमकीला नीला रंग चित्र में चार चांद लगा देता है।

अजंता में हरे रंग का सबसे अधिक उपयोग हुआ है। हरा रंग आसपास के पहाड़ों में पाए जाने वाले ग्लूकोनाइट नाम के हरे पत्थर से बनता था। काले रंग के लिए दिये से बने काजल का उपयोग किया जाता था। काला रंग ही एक मात्र ऐसा रंग था जो चट्टान या पत्थरों से नहीं बनता था।

अजंता के चित्रों से यह भी पता चलता है कि कुछ जगहों पर पौधों से प्राप्त रंगों का भी उपयोग किया गया है। मगर ये रंग कुछ समय बाद उड़ गए। उदाहरण के लिए चित्रों में लोगों के होंठों को रंगने के लिए शायद पौधों से प्राप्त लाल रंग का उपयोग किया गया था। लेकिन यह लाल रंग तो उड़ गया और उसकी जगह मात्र एक सफ़ेद धब्बा दिखता है।

ये तो हुई रंगों की बात। गुफा की दीवारों को, उन पर चित्र बनाने से पहले, ख़ास तरीक़े से तैयार किया जाता था। तुमने पढ़ा होगा कि आदिमकाल में गुफाओं में चित्र सीधे चट्टान पर ही बनाए जाते थे। लेकिन अजंता के चित्रकार 'चित्र बनाने के पहले दीवार को समतल करते थे। इसके लिए वे पहले मिट्टी, रेत और धान की भूसी या गोबर को मिलाकर दीवार पर लगाते थे। फिर इस पर चूने का एक पतला प्लास्टर किया जाता था। इसके बाद चूने का एक हल्का लेप करके उस पर गेरू से रेखांकन किया जाता था। फिर उसमें रंग भरे जाते थे।

इस तरीक़े में एक ही ख़ामी थी। मिट्टी के लेप की वजह से उस पर लगाया गया रंग उखड़ने का डर रहता था। उसकी पपड़ी जैसी जम जाती थी। कहीं-कहीं रंगों में मिलाई गई गोंद का असर धीरे-धीरे ख़त्म हो जाने पर भी रंग उखड़ना शुरू हो जाते थे। इसीलिए अजंता के चित्रों में जगह-जगह रंग उखड़े दिखाई देते हैं।

वैसे तो चित्रों में रंग उन्हें सुंदर बनाने और निखारने के लिए भरे जाते हैं। लेकिन अजंता के चित्रों में रंगों का इस्तेमाल प्रतीक रूप में किया गया है। जैसे मानव आकृतियों में भरा गुलाबी तथा भूरा रंग गौर वर्ण का प्रतीक है। कुछ आकृतियों में सिंदूरी रंग भरा गया है जो शक्ति का प्रतीक है। इसी तरह दर्पण में मुख देखती स्त्री के शरीर में हरा रंग भरा गया है, जो ताज़गी का संकेत करता है।

अजंता के चित्र वास्तव में सामूहिक चित्र हैं। प्रत्येक चित्र को कई कलाकारों ने मिलकर बनाया है। जैसे जो कलाकार मानव आकृतियां बनाने में माहिर थे, वे उनका रेखांकन करते थे। इसी तरह कुछ कलाकार जानवरों के चित्र ही बनाते थे, तो कुछ केवल डिज़ाइन। कुछ कलाकार पेड़-पौधों को चित्रित करते थे तो कुछ केवल चित्रों की आउट लाइन बनाते थे। फिर उनमें रंग भरने का काम अन्य कलाकार करते। एक पूर्ण चित्र, एक तरह से कई कलाकारों की मिली-जुली प्रतिभा को दर्शाता है। सच्चाई यह है कि अजंता के ये चित्र कलाकारों की कई पीढ़ियों ने मिलकर बनाए हैं।

❑ सी.एन. सुब्रह्मणयम

[चित्र, अजंता म्यूरलस् (संपादक- ए. घोष) से साभार]

सामने के पृष्ठ पर रंगीन चित्र देखो-

(ऊपर) फूल व बेलों के बीच बतख का जोड़ा। ध्यान से देखो, इसमें कितने अलग-अलग तरह के रंगों और उनके शेड्स का इस्तेमाल किया गया है। यह अजंता की गुफा नं. 1 की छत पर बने चित्र का हिस्सा है।

(नीचे) क्या तुम पहचान सकते हो इस चित्र में किस जानवर को चित्रित किया गया है। ठीक पहचाना, भैंस, ही हैं। कुछ काली और कुछ भूरी। यह भी गुफा नं. 1 की छत पर बने चित्रों का हिस्सा है।

पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत।
डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/92

सौम्या, ग्यारह वर्ष, भोपाल

रैक्स डी रोजारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित
संपादक : विनोद रायना